खंड

2

शुकनासोपदेशः

इकाई 5
शुकनासोपदेश परिचय 63

इकाई 6
शुकनासोपदेश (लक्ष्मीदोषवर्णन) – भाग 1 77

इकाई 7
शुकनासोपदेश (लक्ष्मीदोष वर्णन) – भाग 2 87

इकाई 8
शुकनासोपदेश (राजाओं की विभिन्न दशाओं का निरूपण) – भाग 1 96

इकाई 9
शुकनासोपदेश (राजाओं की विभिन्न अवस्थाओं का निरूपण) – भाग 2 107

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 5 शुकनासोपदेश परिचय

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 बाणभट्ट का परिचय

5.3 शुकनासोपदेश का परिचय

- 5.3.1 कादम्बरी का परिचय
- 5.3.2 शुकनासोपदेश का परिचय
- 5.3.3 शुकनासोपदेश में वर्णित सामाजिक और राजनैतिक विचार
- 5.3.4 शुकनासोपदेश की प्रमुख सूक्तियाँ

5.4 प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

- 5.4.1 चन्द्रापीड का चरित्र-चित्रण
- 5.4.2 पुण्डरीक का चरित्र-चित्रण
- 5.4.3 शुकनास का चरित्र-चित्रण
- 5.4.4 महाश्वेता का चरित्र-चित्रण
- 5.4.5 कादम्बरी का चरित्र-चित्रण

5.5 सारांश

5.6 शब्दावली

5.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.8 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- गद्य काव्यकारों में बाणभट्ट के स्थान के विषय में ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- गद्यकाव्य में बाणभट्ट रचित कादम्बरी की विशेषता जान सकेंगे।
- कादम्बरी की कथावस्तु से परिचित हो सकेंगे।
- कादम्बरी के पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष में विद्यमान भिन्नता को समझ सकेंगे।
- गद्यकाव्य में वर्णित भाषागत सौष्ठव एवं वर्णन की विशेषता से परिचित होंगे।
- बाणभट्टकालीन राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों को समझेंगे।
- शुकनास द्वारा चन्द्रापीड को दिए गए प्रशासनिक कर्त्तृव्योपदेश से भी परिचित होंगे।
- कादम्बरी गद्यकाव्य के पात्रों के स्वभाव से परिचित होंगे।
- कादम्बरी में वर्णित जीवनोपयोगी उपदेशों को जान कर परिष्कृत व्यवहार के लिए प्रेरित हो सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रों! संस्कृत गद्य-साहित्य से सम्बन्धित यह पाँचवीं इकाई है। इसमें बाणभट्ट कृत कादम्बरी नामक रचना का वर्णन है, जो एक गद्यकाव्य होने पर भी पद्यकाव्य के जैसा आस्वादन कराती है। इस काव्य में महाश्वेता, कादम्बरी जैसी नायिकाओं का वर्णन है, जिसे पढ़कर साहित्य-रसिकों का हृदय कमल की तरह खिल उठता है। बाणभट्ट की इस प्रकार की रचनाओं के कारण ही संस्कृत साहित्य जगत में उनका नाम शीर्ष स्थान पर लिया जाता है। कादम्बरी काव्य एक प्रेम कथा तो है ही, किन्तु इसका उत्तर पक्ष इससे बिल्कुल अलग, राजव्यवस्था की कूटनीतियों एवं लक्ष्मी के स्वभाव को जानने के साथ-साथ राजसभा में विद्यमान अपने ही बान्धवों से सावधान रहने हेतु भी जागरूक करता है।

5.2 बाणभट्ट का परिचय

बाणभट्ट संस्कृत साहित्य के ऐसे कवि हैं, जिनका सम्पूर्ण परिचय उनकी रचनाओं में ही प्राप्त हो जाता है। कादम्बरी की भूमिका तथा हर्षचरित के प्रथम दो उच्छ्वासों में बाणभट्ट ने अपनी वंश परम्परा का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। तदनुसार ये वात्स्यायन गोत्र के ब्राह्मण थे। बाण बिहार के शाहबाद (आरा) जनपद के प्रीतिकूट के रहने वाले थे। इनके पिता का नाम चित्रभानु व माता का नाम राजदेवी था। माता का देहान्त बाण के शैशवावस्था में ही हो गया था। पिता ने ही माता-पिता दोनों की भूमिका का वात्सल्यपूर्वक निर्वाह कर इनका पालन-पोषण किया। बाण जब 14 वर्ष के थे तो उनके पिता का भी स्वर्गवास हो गया।

पिता की मृत्यु के बाद बाण अपने मित्रों के साथ ही समय यापन करने लगे। इन्होंने किशोरावस्था में देशभ्रमण कर लिया और फिर वापस अपने जन्मस्थान पर आ गए थे। बाण की उच्चकोटिक विद्वत्ता से कुण्ठित हो कर, कुछ अन्य ईर्ष्यालु विद्वानों ने राजा हर्षवर्धन से उनकी शिकायत की जिसके कारण उन्हें राजा हर्षवर्धन ने राजसभा में बुलाकर 'अयमसौ भुजङ्गः' कहकर अपमानित किया। बाद में बाण ने धैर्यपूर्वक अपनी स्थिति स्पष्ट कर हर्षवर्धन का भ्रम दूर किया। माना जाता है कि हर्षवर्धन ने बाणभट्ट की विद्वत्ता से प्रसन्न होकर उन्हें राज्याश्रय प्रदान किया। इसी क्रम में बाणभट्ट ने प्रीतिकूट आकर 'हर्षचरित' की रचना की और राजा के चरित्र को काव्य के माध्यम से अमर कर दिया।

बाणभट्ट का समय— गद्यकाव्यकार बाण सम्राट हर्षवर्धन की राजसभा के सभापण्डित थे, अतः उनके समकालिक माने गए हैं। इस आधार पर इनका समय 606 से 645 ई. तक माना जा सकता है। राजा हर्षवर्धन ने इस समय सीमा में उत्तरी भारत में शासन किया था।

चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपने भारत भ्रमण के लेख में भी हर्षवर्धन और बाणभट्ट का वर्णन किया है। ह्वेनसांग भारत में 629 से 645 ई. के बीच आए थे। अतः इन सब तथ्यों को देखते हुए बाणभट्ट का समय 620 ई. के समीप का माना जा सकता है।

बाणभट्ट ने अपने लेखों में अपने पूर्ववर्ती लेखकों और कृतियों का भी वर्णन किया है जैसे – भास, वासवदत्ता, कालिदास, बृहत्कथा इत्यादि। भोजराज ने भी बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में सरस्वतीव्याकरण में **"यादृग् गद्यविधौ बाणः पद्यबन्धे न तादृशः"** कहकर उन्हें अपने पूर्व का सिद्ध किया है। इन प्रमाणों के आधार पर इन्हें सप्तम शताब्दी के पूर्वार्ध का माना जा सकता है।

बाणभट्ट की रचनाएं – बाण ने संस्कृत साहित्य की सर्वोत्कृष्ट कृतियों की रचना कर संस्कृत साहित्य ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व के काव्यकारों में भी विशेष यश प्राप्त किया

है। बाणभट्ट की रचनाएं निम्नलिखित हैं –1. हर्षचरित (आख्यायिका), 2. कादम्बरी (कथा), 3. चण्डीशतकम् (श्लोकपूर्ण स्तुति) 4. मुकुटताडितक (नाटक), 5. पार्वती-परिणय (नाटक)।

5.3 शुकनोसोपदेश का परिचय

शुकनासोपदेश कादम्बरी का ही एक भाग है किन्तु इसका अपना स्वतन्त्र महत्त्व है। यह एक उपदेशात्मक ग्रन्थ है जिसमें बाणभट्ट ने जीवन दर्शन के प्रत्येक दृष्टिकोण को वर्णित किया है। तारापीड नामक राजा का अनुभवी व नीति-निपुण शुकनास नामक मन्त्री राजकुमार चन्द्रापीड (तारापीड के पुत्र) को राज्याभिषेक से पूर्व वात्सल्य भाव से उपदेश देकर उसे रूप, यौवन, प्रभुता तथा ऐश्वर्य जैसे दुर्गुणों से सावधान रहने की शिक्षा प्रदान करता है। शुकनासोपदेश में इसी उपदेश का वर्णन है।

5.3.1 कादम्बरी का परिचय

कादम्बरी महाकवि बाणभट्ट की संस्कृत गद्य-साहित्य के लिये अमर कीर्ति है। कादम्बरी में बाण के साहित्य का चरमोत्कर्ष प्राप्त होता है। यह कथा-जगत् की सर्वोत्कृष्ट कृति मानी जाती है। बाणभट्ट ने कादम्बरी के पूर्वार्द्ध में मंगलाचरण और मुख्यकथा का वर्णन किया है। उन्होंने 20 पद्यों में मंगलस्तुति, गुरु तथा वंश परिचय, सज्जन-स्तुति एवं दुर्जन-निन्दा का उल्लेख करते हुए अपनी कथा सकुशल प्रस्तुत की है।

यह कहा जाता है कि बाणभट्ट की मौलिक कृति केवल पूर्वार्ध ही है, जो सम्पूर्ण कादम्बरी का दो तिहाई भाग है। उत्तरार्ध भाग की रचना उनके पुत्र भूषणभट्ट ने उनकी मृत्यु के बाद की है। कादम्बरी के विषय में किसी कवि ने कहा है – **"कादम्बरीरसज्ञानामाहारोऽपि न रोचते।"** कादम्बरी का पूर्वार्ध भाग इस प्रकार आरम्भ होता है –

राजा शूद्रक एक दिन अपनी सभा के राजसिंहासन पर आरूढ थे, तभी वहाँ पर एक चाण्डालकन्या पिंजरे में एक शुक को लेकर आती है। वैशम्पायन नामक यह शुक अद्भुत एवं मेधावी है। वह राजसभा में आते ही अपना दाँया पैर आगे कर श्लोक उच्चारण कर राजा का अभिनन्दन करता है। यह देख सम्पूर्ण सभा में कौतूहल उत्पन्न हो जाता है। जब राजा भी उत्सुकता से उसका परिचय जानना चाहता है, तब तोते ने अपना परिचय देते हुए कहा कि मैं विन्ध्याटवी के तट पर शाल्मली वृक्ष पर रहता था, वहाँ पर अनेक शुक परिवार रहते थे, उनमें से एक वृद्ध शुक की मैं सन्तान हूँ। एक बार शबर सेनापति अपनी सेना के साथ विन्ध्याटवी से निकला। उनकी सेना में से ही एक सैनिक कई शुकों को मारकर अपने साथ ले गया किन्तु मैं उड़ने में अभी असमर्थ था कथंचित् अपने प्राण बचाने में सफल रहा और सरोवर पर स्नान के लिए आए मुनि पुत्रों द्वारा देखा गया। वे मुझे महर्षि जाबालि के आश्रम में ले गए। मैं वहाँ के वातावरण से बहुत ही प्रभावित हुआ। महर्षि ने मुझे देखा और कुछ देर ध्यान कर कहा कि यह शुक अपने कर्मों का ही फल भोग रहा है। यह सुन वहाँ सभी मेरी कथा सुनने के लिए व्याकुल हो गए और महर्षि से मेरी कथा सुनाने का आग्रह करने लगे। तब महर्षि ने कथा सुनाना प्रारम्भ किया किन्तु उससे पहले कहा यह शुक अपनी कथा सुनकर अपने पूर्वजन्म को जान जाएगा, इस प्रकार मुनि ने विन्ध्याटवी में मेरे जन्म से जाबालि मुनि के आश्रम पहुँचने तक की कथा इस प्रकार वर्णित की– उज्जयिनी में तारापीड नाम का राजा था, जिसकी रानी विलासवती थी। उसका एक कुशल मन्त्री शुकनास था, जिसकी पत्नी का नाम मनोरमा था। राजा ने पुत्र प्राप्ति के लिए देवार्चन किया जिससे उन्हें एक पुत्र की प्राप्ति हुई, जिसका नाम चन्द्रापीड रखा गया। चन्द्रापीड के जन्म के दिन शुकनास के घर भी पुत्र हुआ, जिसका नाम ज्योतिषियों ने वैशम्पायन रखा। दोनों कुमारों को ज्ञान प्राप्ति के समान अवसर दिए गए। विद्या ग्रहण करने के बाद चन्द्रापीड का

राज्याभिषेक हुआ। दोनों मित्र चन्द्रापीड एवं वैशम्पायन दिग्विजय के लिये निकल पड़े। तीन वर्ष दिग्विजय करने के बाद दोनों कुमार एक दिन सुन्दर किन्नर दम्पत्ति का पीछा करते हुए अच्छोद सरोवर पहुँच गये। वहाँ पर चन्द्रापीड ने वीणा पर गान करती हुई महाश्वेता नामक गन्धर्व-कन्या को देखा। चन्द्रापीड ने उसके संन्यासिनी होने का कारण पूछ। महाश्वेता ने बताया कि एक समय पुण्डरीक और मैं एक दूसरे पर मोहित हो गए। पुण्डरीक ने विरह की आकुलता में अपने प्राण त्याग दिए। यह जानकर मैं भी मरने को उद्यत हुई किन्तु चन्द्रमा ने पुण्डरीक से पुनः मिलाप का आश्वासन दिया, तब से मैं यहाँ उसकी प्रतीक्षा कर रही हूँ। महाश्वेता की सखी कादम्बरी ने भी पुण्डरीक के पुनः मिलने तक अविवाहित रहूँगी, ऐसा प्रण लिया है।

महाश्वेता चन्द्रापीड को कादम्बरी के पास ले गई एवं दोनों ही प्रथम साक्षात्कार में ही परस्पर मोहित हो गए किन्तु राजा का समाचार पाते ही चन्द्रापीड वैशम्पायन को वहीं छोड़ महल चले आए किन्तु लम्बे समय तक वैशम्पायन के महल न आने पर चन्द्रापीड उसे खोजता हुआ वन पहुँचा। वहाँ ज्ञात हुआ की वैशम्पायन महाश्वेता पर मोहित हो गया था, जिस कारण से महाश्वेता ने वैशम्पायन को शुक होने का शाप दिया और वो मर गए यह जानकर दुःख में व्याकुल चन्द्रापीड ने भी अपना शरीर त्याग दिया।

चन्द्रापीड की मृत्यु का समाचार सुनते ही कादम्बरी भी मरने को तैयार हो गई किन्तु आकाशवाणी हुई की ''दोनों धैर्य रखो। दोनों का अपने प्रेमियों से पुनः मिलन होगा।'' यह कथा सुन शुक को अपना पूर्व प्रेम याद आ गया और वह उसे खोजने चल पड़ा किन्तु मध्य में ही चाण्डालकन्या द्वारा पकड़ा गया और आपके पास लाया गया। इतना कहकर शुक शान्त हो जाता है।

चाण्डालकन्या ने कहा मैं ही पुण्डरीक की माँ हूँ और आप चन्द्रापीड़ हैं। यह सुनते ही उसे भी पूर्व जन्म याद आ गया और शुक और राजा ने अपना शरीर त्याग दिया क्योंकि उनकी शाप की अवधि समाप्त हो गई थी।

चन्द्रापीड़ एवं पुण्डरीक का पुनः जन्म हुआ वे सब पुनः मिले और उनके माता-पिता भी वहाँ पहुँच गये इस प्रकार कादम्बरी कथा का सुखद अन्त होता है।

5.3.2 शुकनासोपदेश का परिचय

बाणभट्ट द्वारा रचित कादम्बरी का ही एक भाग है शुकनासोपदेश। शुकनासोपदेश कादम्बरी का अंश होते हुए भी स्वतन्त्र महत्त्व रखता है। राजकुमार के राज्याभिषेक से पूर्व मन्त्री शुकनास के द्वारा दिए गये उपदेश जैसे अनर्थ परम्परा, युवावस्था का प्रभाव, गुरु का महत्त्व, लक्ष्मी की प्रकृति, राजाओं के प्रति लक्ष्मी के आचरण तथा उसका प्रभाव, कूटनीति तथा राजा की प्रकृति इत्यादि शुकनासोपदेश का विषय हैं। शुकनास राजकुमार को उपदेश देते हुए कहते हैं कि इन दुर्गुणों में से एक भी आपका अनर्थ कर सकता है, फिर सबका होना तो परम नाश का कारण होगा ही। युवावस्था के आने पर शास्त्रज्ञान से पूर्ण व्यक्ति की भी बुद्धि मलिन हो जाती है। इस अवस्था में आकृष्ट करने वाली शक्तियाँ अत्यधिक प्रबल होती हैं, जो आपको अन्त में (युवावस्था के अन्त में) अत्यधिक दुःख देंगी। विषयों की अतीव आसक्ति मानव को कुमार्ग पर ले जाकर उसका नाश कर देती है।

गुरू की महिमा – जिस प्रकार कर्ण गुहा में विद्यमान जल निर्मल होने पर भी वेदना उत्पन्न करता है, ठीक उसी प्रकार दुर्जनों को पावन निर्मल गुरुजनों के निष्कपट व कल्याणप्रद उपदेश वेदनापूर्ण लगते हैं। कहीं सत्पुरुषों को गुरु वाणी ऐसी लगती है, मानो शङ्खों का आभूषण गज के मुख में सुशोभित हो गया है। गुरु का ज्ञान मनुष्यों को ऐसे

प्रकाशित करता है जैसे प्रारम्भ की शशि सघन अन्धकार को दूर कर देती है। गुरूपदेश सभी प्रकार की बुराई को समाप्त कर प्रगति का मार्ग है। बालों को सफेद किए बिना रोग से रहित वार्द्धक्य है।

गुरूपदेश की महिमा राजाओं के लिये अधिक महत्त्वपूर्ण है क्योंकि राजाओं को उपदेश देने वाले कम ही होते हैं। राजा लोग उपदेश कम ही सुनते हैं और यदि सुन भी लें तो गज की तरह एक कान से सुनकर दूसरे कान से निकाल देते हैं। जिस कारण गुरु दुःखित हो जाते हैं और राजा का भी शीघ्र ही पतन हो जाता है।

लक्ष्मी का स्वभाव – शुकनासोपदेश में लक्ष्मी की प्रकृति के विषय में बहुत अच्छा वर्णन प्राप्त होता है। यहाँ पर मन्त्री शुकनास कहते हैं कि – अपना परिचय न रखने वाली इस संसार में ये लक्ष्मी सबसे नीच है क्योंकि यदि ये आपको मिल जाती है, तो भी बड़ी कठिनाई से ही आपके पास रहती है। योद्धा एवं हाथियों से संरक्षित करने पर भी ये भाग जाती है। यह भ्रमणशील है एवं यह शक्तिशाली राजा को भी छोड़कर चली जाती है। जिस प्रकार लता वृक्ष का आलिङ्गन करती है उसी प्रकार यह नीच जनों का आलिङ्गन करती है। यह बुलबुलों की भाँति चंचल है। यह क्षणिक शोभा प्रदान करने वाली है। इस प्रकार कई बातें शुकनासोपदेश में लक्ष्मी के बारे में वर्णित हैं।

राजाओं के प्रति लक्ष्मी का आचरण – भाग्यवश अपनाए गए राजा विलासी व दुराचारी बन जाते हैं तथा क्रोधादि बुराइयों के शिकार हो जाते हैं।

दुष्टों की कूटनीति और राजा की प्रकृति – दुष्ट लोग स्वार्थ साधने के लिए राजा की सभा में गृद्ध पक्षी की तरह राजसभा में बक बनकर बैठे रहते हैं और अज्ञानी राजा भी उनकी प्रशंसा को अपना आदर समझता है जो उसके पतन का कारण बनते हैं।

शुकनास अपने उपदेश के अन्त में कहता है कि हे राजकुमार! यह शासन-व्यवस्था एवं यौवन अवस्था आपके बुद्धि-विवेक को न हर ले, ऐसा प्रयास करें, जिससे आपकी समस्त प्रजा सदैव आपका आदर करती रहे। चन्द्रापीड शुकनास के उपदेश से मानो फिर से निर्मल और कान्तियुक्त सा हो गया।

इस प्रकार शुकनास द्वारा दिए गए चन्द्रापीड को उपदेश में कवि की प्रतिभा का चरमोत्कर्ष दिखाई देता है। इसमें बाणभट्ट का शब्द चातुर्य प्रशंसनीय है।

5.3.3 शुकनासोपदेश में वर्णित सामाजिक और राजनैतिक विचार

1) **सामाजिक विचार** – बाणभट्ट की इस रचना में समाज और साहित्य का अटूट सम्बन्ध दिखाया गया है। सफल कवि बहुत से विषयों को अपने अनुसार परिवर्तित कर देता है। बाण की इस रचना से ज्ञात होता है कि तात्कालिक समाज में वर्णव्यवस्था तो थी, किन्तु जातीय कट्टरता नहीं थी। चाण्डालकन्या को भी बिना किसी बाधा के राजसभा में प्रवेश की अनुमति मिलना इसका प्रमाण माना जा सकता है। लोगों में परस्पर स्नेह सम्बन्ध था। ब्राह्मण अध्ययन-अध्यापन का कार्य करते थे। राज्य-शासन एवं सुरक्षा का कार्य क्षत्रियों पर था। वैश्य व्यापार करते थे। शूद्र सेवा का कार्य करते थे। शिक्षा की व्यवस्था सम्यक् रूप से थी। धनी लोगों के लिये स्वतन्त्र शिक्षा भी दी जाती थी। उस समय द्यूतक्रीडा, नृत्य और चित्रकला का प्रचलन था।

   लिङ्गभेद अधिक नहीं था, जिस कारण लड़कियाँ अपना स्वयंवर कर सकती थीं। महिलाओं का आदर होता था। ज्ञानी व ज्येष्ठ लोगों का पूरा सम्मान होता था।

शुकनासोपदेश के अनुसार पिता का सन्देश आते ही चन्द्रापीड का महल में लौटना, पिता के सम्मुख पृथ्वीतल पर ही बैठना इत्यादि ज्येष्ठों के प्रति आदर को प्रदर्शित करता है। यह सत्य है कि उस समय सती-प्रथा थी किन्तु उसकी निन्दा और विरोध आरम्भ हो गया था। मैत्री को विशेष महत्त्व दिया जाता था। उस समय धर्म परिवर्तन भी होते थे। धर्म के प्रति कोई कठोर नियम नहीं थे। स्वास्थ्य पर लोग ध्यान देते थे।

संस्कार परम्परा हुआ करती थी। लोग उनका आदर भी करते थे। कुछ सीमा तक अन्धविश्वास भी लोगों में था। मूर्ति-पूजन, मूर्ति स्थापना जैसे विषय तब के समाज में देखने को मिलते हैं। किन्तु लोगों को धर्म के नाम पर ठगा नहीं जाता था। समाज में शान्ति एवं सुव्यवस्था थी।

2) **राजनैतिक विचार** – यह सत्य है जहाँ राजा हो और लक्ष्मी का वास हो, उस राज्य में राजनीति होना स्वाभाविक है क्योंकि बिना राजनीति के राजतन्त्र का चलना सम्भव नहीं है। बाण ने भी अपनी रचना में राजनीतिक स्थिति का वर्णन किया है। उस समय साम्राज्यवाद ही प्रचलन में था। साम्राज्यवाद के अनुसार राजा के पास असीमित अधिकार होते थे। उसकी मन्त्रिपरिषद् हुआ करती थी, जिसमें अनेक मन्त्री एवं एक प्रधान अमात्य या प्रधान परामर्शक होता था। मन्त्रिपरिषद् की नियुक्ति में शिक्षा-दीक्षा और कौशल के साथ-साथ कुल भी देखा जाता था। तब राजा अपनी सीमाओं का विकास करने में भरोसा करते थे। इस कारण से भारत की भौगोलिक सीमायें दूर-दूर तक फैली हुईं थीं। विभिन्न देशों से भारत के प्रगाढ़ सम्बन्ध थे। उपहारों का आदान-प्रदान भी हुआ करता था। उस समय चार प्रकार की सेनाओं का प्रचलन था। शासन व्यवस्था दृढ़ थी। लोग सुख-शान्ति से जीवन-यापन करते थे। प्रजा की रक्षा व पालन का कार्य राजा पर होता था। प्रजा भी अपने राजपरिवार का पूरा आदर-सम्मान करती थी।

5.3.4 शुकनासोपदेश की प्रमुख सूक्तियाँ

- अपरिणामोपशमो दारुणो लक्ष्मीमदः।
- विषमो विषयविषास्वादमोहः।
- गुरूपदेशः पुरुषाणाम् अखिलमलप्रक्षालनक्षमम् अजलं स्नानम्।
- राज्ञां विरला हि उपदेष्टारः।
- अहङ्कार-दाहज्वर-मूर्च्छान्धकारिता विह्वला राजप्रकृतिः।
- जन्मान्तरकृतम् हि कर्मफलमुपनयति पुरुषस्येह जन्मनि।
- सुभाषितं हारि विशत्यधो गलान्न दुर्जनस्यार्करिपोरिवामृतम्।
- चन्दनप्रभवो न दहति किमनलः?
- तृष्णाविषमूर्च्छिताः कनकमयमिव सर्वं पश्यन्ति।
- खलीकरोति लक्ष्मीरिति।
- अतिगहनं तमो यौवनप्रभवम्।
- राजविषविकारतन्द्राप्रदा राजलक्ष्मीः।

बोध प्रश्न 1

1) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए –

i) कादम्बरी किसकी रचना है ?

....

....

....

....

....

ii) शूद्रक पूर्वजन्म में क्या था ?

....

....

....

....

....

iii) चन्द्रापीड किन्नरयुगल का पीछा करता हुआ कहाँ पहुँचता है ?

....

....

....

....

v) शुकनास किस राजा का मन्त्री था ?

....

....

....

....

....

vi) शुकनासोपदेश में किसे परिचय न रखने वाली कहा गया है ?

....

....

....

....

....

2) निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तरों पर सही का चिह्न लगाइए –

i) कादम्बरी एक पद्यात्मक रचना है – ( )

ii) कादम्बरी का नायक शुकनास है – ( )

iii) चन्द्रापीड का पिता शूद्रक है – ( )

iv) कादम्बरी दो भागों में विभक्त है – ( )

v) कादम्बरी में तीन जन्मों का वर्णन है – ( )

अभ्यास प्रश्न

1) बाणभट्ट का परिचय दीजिए।

2) कादम्बरी कथा का सारांश लिखिए।

3) शुकनासोपदेश में वर्णित राजनैतिक स्थिति का वर्णन कीजिए।

5.4 प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

5.4.1 चन्द्रापीड का चरित्र-चित्रण

बाणभट्ट की कादम्बरी नामक कथा में चन्द्रापीड मुख्य नायक है। कादम्बरी में चन्द्रापीड तीन रूपों में वर्णित हैं – 1. शूद्रक, 2. चन्द्रापीड, 3. चन्द्रमा।

कादम्बरी में चन्द्रापीड एक राजकुमार है। उसमें नायक के समस्त गुण विद्यमान हैं – वह हृष्ट-पुष्ट, बलवान, सुन्दर और मेधावी है। वह ज्ञान में भी निपुण है। वह राजकुल के नियमानुसार जब तक योग्य नहीं हुआ तब तक गुरुकुल में रहा और वहाँ सम्पूर्ण शिक्षाएं प्राप्त करने के पश्चात् गुरु की अनुमति से राजमहल लौटा।

उसकी विनयशीलता और शिष्टता प्रशंसनीय है। पिता की आज्ञा से जब वह राजमहल में आया तो वह आसन पर न बैठकर आदरभाव से जमीन पर बैठ गया। शुकनास के प्रति वह पितृतुल्य व्यवहार करता है एवं उसके सामने भी भूतल पर ही बैठता है। उसकी आज्ञा को श्रद्धा से सुनता है और पालन करता है। जब वह महाश्वेता और कादम्बरी से मिलता है तब भी वह शिष्टता से ही व्यवहार करता है। वह मित्रों के प्रति भी स्नेह, विश्वास और सम्मान भाव रखता है। उसमें वीरता एवं साहस असीमित रूप से है। चन्द्रापीड की रुचि मृगया में भी है। दिग्विजय के लिये जाना उसके अदम्य शौर्य का परिचायक है।

चन्द्रापीड में उदारभाव है जिस कारण वह हर दुःखी व्यक्ति के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करता है। कादम्बरी की वेदना को देखकर व्याकुल हो जाता है एवं इन्द्रायुध अश्व की पीड़ा को भी महसूस कर लेता है और उसे सान्त्वना देता है। उसका प्रेम के प्रति भी भाव अनुपम है। जब तक वह जान नहीं लेता कि गन्धर्वकन्या उससे प्रेम करती है तब तक वह उसे किसी प्रकार से दुःखी नहीं करता। वह कादम्बरी से प्रेम करता है किन्तु अपने राजकीय कर्तव्यों को भी सावधान होकर पूरा करता है। कादम्बरी के साथ अथाह प्रेम होने के बाद भी वैशम्पायन सेना सहित उसे खोजता होगा ऐसा सोचकर कादम्बरी की यादें अपने हृदय में लिए वह महाश्वेता के आश्रम में लौटता है। जैसे ही उसे ज्ञात होता है कि पिता ने उसे वापस आने का सन्देश दिया है तो वह तत्काल उज्जयिनी के लिये प्रस्थान करता है और अपनी इस यात्रा के लिये कादम्बरी और महाश्वेता से क्षमा माँगता है। वह अतिशय आदर के कारण महल में किसी को अपने प्रेम के विषय में नहीं बताता किन्तु अपनी प्रियतमा के समाचार के लिये व्यग्र रहता है। वैशम्पायन के वन से न लौटने पर अप्रिय घटना की

आशंका कर वन की तरफ उसकी खोज के लिये चल देता है। वह कभी भी उसे मन्त्री का पुत्र नहीं समझता, न ही सामान्य मित्र अपितु वह उसे अपना अभिन्न मित्र मानता है। इसका प्रमाण हमें तब मिलता है जब उसे मित्र की मृत्यु का ज्ञान होता है कि वैशम्पायन ने शुक होने का शाप प्राप्त कर देह त्याग दी है, ऐसा सुनकर वह भी मृत्यु को प्राप्त होता है।

सामान्य रूप से कहा जाए तो चन्द्रापीड बल, पौरुष, प्रतिभा एवं शिष्टता, मित्रता, उत्कट आदर्श आदि गुणों से परिपूर्ण था।

5.4.2 पुण्डरीक का चरित्र-चित्रण

पुण्डरीक कादम्बरी कथा का उपनायक है। कथा में इसके भी तीन जन्मों का उल्लेख है – 1. पुण्डरीक, 2. शुकानासपुत्र वैशम्पायन, 3. शुक। यह लक्ष्मी का मानस पुत्र है किसी समय की बात है श्वेतकेतु से आकृष्ट हुई लक्ष्मी के द्वारा वह कमल के ऊपर उत्पन्न हुआ था, जिसके कारण इसे पुण्डरीक नाम दिया गया। वह लक्ष्मी का पुत्र था इसलिये वह बहुत ही सुन्दर और आकर्षक था। गन्धर्वकन्या महाश्वेता पुण्डरीक को देखकर प्रथम दर्शन में ही इस पर पूर्ण रूप से आसक्त थी। लक्ष्मी का पुत्र होने के कारण वह हृदय से बहुत ही कमजोर है। यही कारण है कि वह एक तपस्वी होने पर भी अपने धर्म से विचलित हो गया और कामातुर हो महाश्वेता से प्रथम-मिलन पर ही सब कुछ भूलकर उस पर सम्पूर्णरूप से आसक्त हो जाता है। पुण्डरीक का मित्र उसे इस विषय से बाहर निकालने का सम्पूर्ण प्रयास करता है किन्तु पुण्डरीक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वह इतना कामातुर हो जाता है कि उसके विरह में चन्द्रोदय होते ही अपनी धीरता नष्ट कर लेता है और कपिंजल के द्वारा महाश्वेता को बुलाए जाने पर प्राण छोड़ देता है और यहाँ पर चन्द्रमा के साथ शाप देने की प्रतिद्वन्द्विता तक हो जाती है।

अगले जन्म में वह महामन्त्री का पुत्र वैशम्पायन बनता है। इस जन्म में वह चन्द्रापीड का अभिन्न परमप्रिय मित्र है। किन्तु बाण ने वैशम्पायन का इस जन्म में कोई विशेष वर्णन नहीं किया? इस जन्म में भी वह बुद्धि, आचार आदि दृष्टि से प्रशस्त है किन्तु उसकी मानसिक दुर्बलता इस जन्म में भी है क्योंकि जब वह अच्छोद सरोवर के आश्रम में पूर्वजन्म की प्रेमिका को देख लेता है तो वह अपनी धीरता पुनः खो बैठता है और उज्जयिनी जाने से मना करता है। सेना के जाने के बाद अकेले अत्यधिक कामातुर होकर अपनी प्रेमिका महाश्वेता के अस्वीकार करने पर भी पुनः-पुनः उसके पीछे जाता है और प्रणय निवेदन करता है। दुःखी हो महाश्वेता उसे शुक बनने का शाप देती है। तब वह मृत्यु को प्राप्त कर शुक का जन्म लेता है।

यह शुक का तीसरा जन्म है। यहाँ भी उसकी चंचलता उसके स्वभाव में है। महर्षि जाबालि से अपने पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुन अपने जन्म को याद कर अपनी प्रेमिका का पुनःस्मरण कर उसकी खोज में निकल पड़ता है। उसे यह भी ज्ञात है कि उसके पिता श्वेतकेतु उसके अनिष्ट की निवृत्ति के लिये अनुष्ठान कर रहे हैं। अनुष्ठान के समापन तक आश्रम में रुकने का आदेश है किन्तु वह शुक जन्म में भी महाश्वेता के प्रति कामातुर है। वह बिना सोचे समझे महाश्वेता की तलाश में उड़ जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि मध्यमार्ग में ही चाण्डालकन्या उसे पकड कर पिंजरे में बन्द कर देती है और उसे महाराज शूद्रक की राजसभा में प्रस्तुत करती है। यहाँ पर इसे तीनों जन्म में लक्ष्मी के पुत्र वाली चंचलता के साथ वर्णित किया गया है।

5.4.3 शुकनास का चरित्र-चित्रण

शास्त्रों में निपुण, सर्वगुण सम्पन्न, सर्वश्रेष्ठ विद्वान् उच्च विचारों वाला, राजनीतिज्ञ, कुशल व्यक्तित्व, योग्य सेनापति इत्यादि सम्पूर्ण गुणों से पूर्ण शुकनासोपदेश में इसका सर्वाधिक

महत्त्वपूर्ण चरित्र है। ये जन्म से ब्राह्मण हैं और उच्च श्रेणी के दूरदर्शी तथा शान्तप्रकृति के राजनीतिज्ञ हैं। शुकनास अनुभवी होने के साथ-साथ भले और बुरे की पहचान रखते हैं। ये राजभक्त, निडर और अपने कर्तव्य के प्रति स्थिर रहने वालों में से हैं। राज्य में हो रही प्रत्येक गतिविधि का उन्हें ज्ञान रहता है। वो पहली ही नजर में मानव की दुर्बलता को पहचान जाते हैं। धन-सम्पत्ति की छत्र-छाया में होने वाले प्रत्येक कृत्य का वो ज्ञान रखते हैं, शुकनास प्रत्येक शिक्षा से परिचित हैं और उन्हें यह भी ज्ञात है कि कौन सा ज्ञान कब दिया जाना चाहिए। इसलिये वे राजकुमारों को कुमार्ग से बचाने के लिये समय-समय पर गुरूपदेश और सही समय पर उसको व्यवहार में लाना सिखाते हैं। वे राजकुमारों को धूर्तों से बचने के उपाय भी बताते हैं। शुकनास निडर स्वभाव के उपदेशक हैं। उन्हें यह ज्ञात है कि राजा ही जनता के भाग्य निर्माता हैं। वे यह भी जानते हैं कि एक अयोग्य राजा जनता को संकट में ड़ाल सकता है क्योंकि राजलक्ष्मी के अहंकार में बड़े-बड़े कुकृत्य करने से भी नहीं हिचकते। कई बार अपने चापलूस अनुचरों की बातों में आकर वह अपने आपको भगवान् विष्णु या भगवान् शिव का अवतार समझ बैठते हैं। जो प्रजा को अपने दर्शन देना भी जनता पर महती कृपा मानते हैं। शुकनास राज्याभिषेक से पूर्व चन्द्रापीड को अच्छे शासक के गुणों का पाठ पढ़ाते हैं और उसे एक अच्छे नायक के रूप में देखना चाहते हैं, जिससे प्रजा समृद्ध एवं सुखी रहे।

कादम्बरी के शुकनासोपदेश के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि इसमें प्रत्येक शब्द शुकनास के चरित्र का वर्णन करने वाला है। वह एक यर्थाथवादी दृष्टिकोण रखने वाला मन्त्री है।वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भी प्रत्येक राष्ट्र के लिए शुकनास जैसे व्यवहार कुशल, गम्भीर, पवित्र, चरित्रवान, योग्य, सर्वशास्त्र ज्ञाता, परिस्थिति को समझने की क्षमता वाले मन्त्री की प्रासंगिकता है।

5.4.4 महाश्वेता का चरित्र-चित्रण

यह गन्धर्व राजकुमारी है और अत्यन्त गौरवर्णीय सुन्दर राजकुमारी है। इसका नाम महाश्वेता सार्थक ही है। यह प्रस्तुत कृति में द्वितीय कथा की नायिका है। बाण ने इसका वर्णन सात्त्विक रूप से किया है। इसका परिचय नियमवती तपस्विनी के रूप में होता है। महाश्वेता विपत्तियों का सामाना करते हुए निर्भीक और गम्भीर हो चुकी है। यह तब देखने को मिलता है जब उसे एकान्त वन में अज्ञात नवयुवक चन्द्रापीड मिल जाता है किन्तु वह उससे डरती नहीं है अपितु उसका स्वागत करती है।

महाश्वेता इस कथा में आदर्श प्रेमिका की भूमिका को प्रस्तुत कर रही है। अपने प्रति प्रेमालाप में मरने वाले पुण्डरीक की मृत्यु का ज्ञान होते ही वह भी मरना चाहती है किन्तु तभी आकाश से हुई आकाशवाणी को सुन और उस पर विश्वास कर उससे पुनर्मिलन की आशा कर शङ्कर की आराधना में लीन है। इस अवस्था में रहती हुई वह कठोर नियमों का पालन कर रही है। अन्य पुरुषों के प्रति वह सामान्य व्यवहार करती है। वह चन्द्रापीड के प्रति भी सामान्य आचरण करती है। यहाँ तक कि जब उसका पूर्व जन्म का प्रेमी पुण्डरीक वैशम्पायन बन कर आया और प्रणय निवेदन करने लगा, तब उसे भी ठुकरा दिया। उसे क्रोध में शुक बनने का शाप तक दे दिया। वह अपने पूर्वजन्म के प्रेमी पुण्डरीक के अलावा किसी और का नाम तक नहीं सुनना चाहती।

इस कथा में यह विशेष है कि प्रथम जन्म में उसके वियोग में ही पुण्डरीक की मृत्यु हो गई थी और दूसरे जन्म में भी उसके शुक होने के शाप से उसकी मृत्यु हो गई थी। इस प्रकार दोनों ही जन्म में वह उसकी मृत्यु का कारण बनी। वह अपने दुःख से दुःखी कादम्बरी को समझाने के लिए एक सुन्दर राजकुमार को साथ ले जाती है। इससे ज्ञात होता है कि वह

सखी के प्रति भी अपना स्नेह रखती है। चन्द्रापीड की मृत्यु वैशम्पायन के वियोग से हो गई जिससे उसकी सखी अत्यन्त दुःखी है। उसे देख वह और भी दुःखी होती है। जब चन्द्रापीड के माता-पिता उसे ढूढंते हुए वहाँ पहुँचे तो वह लज्जा और दुःख के कारण गुफा में छिप जाती है। वह चन्द्रापीड की मृत्यु का कारण स्वयं को जानकर उन्हें मुँह नहीं दिखाना चाहती।

महाश्वेता के प्रति पाठकों की विशेष रुचि स्वाभाविक है। वल्लभ से मिलने के पश्चात् उसकी प्रतीक्षा पूर्ण हुई। इस प्रकार कादम्बरी के समान इसका भी अपना स्वतन्त्र अस्तित्व था। आजीवन कष्ट पाकर भी अपने प्रेमी की प्रतीक्षा करना अन्त में उसे प्राप्त करना उसके दृढ संकल्प का द्योतक है।

5.4.5 कादम्बरी का चरित्र-चित्रण

कादम्बरी गद्यकाव्य में मुख्य नायिका के रूप में कादम्बरी का ही चित्रण किया गया है। बाण ने कादम्बरी के सौन्दर्य वर्णन में अपनी सम्पूर्ण कल्पना शक्ति का प्रयोग किया है। बाण द्वारा लिखित यह काव्य रचना सम्पूर्ण नहीं हुई इसलिये कादम्बरी के चरित्र के विषय में पूर्ण मौलिक ज्ञान नहीं मिल पाया। कादम्बरी के नाम पर ही काव्य रचना की गई है किन्तु कादम्बरी का वर्णन हमारे सामने तब लाया जाता है जब इसका विशाल भाग लिखा जा चुका होता है।

कादम्बरी का नाम तब सामने आता है जब महाश्वेता चन्द्रापीड से अपने विषय में अपनी प्रियसखी का वर्णन करते हुए कहती है कि मेरी इस दुःखद दारुण घटना से वह दुःखी है और जब तक मेरा दुःख समाप्त नहीं होगा, तब तक मेरे समान जीवनयापन करते हुए विवाह न करने की उसने प्रतिज्ञा ली है। कादम्बरी ने एक आदर्श सखी के रूप में अपना अस्तित्व स्थापित किया है। जिसके सामने वह अपने माता-पिता की आज्ञा भी नहीं मानती है।

कुछ समय बाद वन में आए चन्द्रापीड से उसको प्रेम हो जाता है किन्तु वह अपना धैर्य नहीं खोती। जब महाश्वेता ने आग्रह किया कि चन्द्रापीड को सम्मान में ताम्बूल दे, तो उस समय भी उसकी स्थिति उद्वेग तुल्य बन गई थी। फिर भी वह अपने संवेग पर नियन्त्रण कर आए हुए अतिथि का सम्मान करती है। वह चन्द्रापीड पर पूर्ण रूप से आसक्त हो जाती है। इस कारण उसका मानसिक द्वन्द्व बढ जाता है। वह कुछ भी चिन्तन नहीं कर पा रही होती है। किन्तु अन्त में उसके संवेगों ने उस पर नियन्त्रण प्राप्त कर लिया और वह स्वयं उससे मिलने चली गई किन्तु उसने कोई भी अनुचित चेष्टा नहीं की। उसने यथासम्भव अपने मन पर विजय पाने का प्रयास किया। कादम्बरी ने अपने मौन व्यवहार से ही चन्द्रापीड के भावों का उत्तर दिया। चन्द्रापीड को राजा द्वारा सन्देश मिलने और अचानक वहाँ से चले जाने पर भी वह अपने को सम्भालती है कि वह एक दिन लौट कर आएगा।

कथा के उत्तरार्ध में जब वैशम्पायन को शुक होने का शाप दिया जाता है और वह वहीं पर मृत्यु को प्राप्त होता है यह समाचार जानने के बाद चन्द्रापीड भी वहीं भूतल पर गिर कर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। उसके मृत शरीर को देखकर कादम्बरी भी मूर्च्छित हो जाती है और उसकी यह दशा देख महाश्वेता उसे रोकर दुःख कम करने को अच्छा नहीं मानती। वह प्रियतम के स्वर्गगमन पर आँसू बहाने को अमंगल मानती है किन्तु कादम्बरी चन्द्रापीड के साथ ही अनुगमन को श्रेष्ठ समझती है। तभी आकाश से आकाशवाणी होती है तुम्हारा पुनर्मिलन होगा। यह सुन वह जीवित रहकर उसकी प्रतीक्षा करने का निश्चय करती है। चन्द्रापीड के माता-पिता को आता देख पुनः मूर्च्छा को प्राप्त हो जाती है। फिर जब माता द्वारा चन्द्रापीड नाम लिया तो पुनः चेतना में आ जाती है। उपर्युक्त वर्णन से यह ज्ञात होता है कि कादम्बरी प्रेम, शिष्टता, मित्रता और सहिष्णुता से युक्त उच्चकोटि की नायिका है।

बोध प्रश्न 2

1) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

i) शुकनास .... स्वभाव के उपदेशक हैं।

ii) चन्द्रापीड अपने राज्य का .... है।

iii) पुण्डरीक को लक्ष्मी के .... के रूप में बताया गया है।

iv) महाश्वेता के विवाह न करने तक .... ने विवाह न करने का प्रण लिया था।

v) कादम्बरी .... के साथ ही अनुगमन को श्रेष्ठ समझती है।

2) निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तरों पर सही का चिह्न लगाइए –

i) शुकनास अनुभवी, बुद्धिमान, राजभक्त और निडर है – ( )

ii) चन्द्रापीड विद्या अध्ययन के बाद वन चला जाता है – ( )

iii) पुण्डरीक शुक जन्म में महाश्वेता द्वारा पकड़ा जाता है – ( )

iv) चन्द्रापीड को देखकर मोहित हुई कादम्बरी अपना धैर्य खो बैठती है– ( )

v) कादम्बरी अपनी कुलमर्यादा को भली-भाँति जानती थी और उसका पालन करती थी – ( )

vi) महाश्वेता पूर्व जन्म में पुण्डरीक पर आसक्त होती है – ( )

3) निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प का चयन कीजिए –

i) मन्त्रिवर शुकनास राजकुमार चन्द्रापीड को युवराज पद ग्रहण करने से पूर्व देते हैं –

क) राज्य   ख) अपना पद

ग) गुरूपदेश   घ) राज मुकुट

ii) चन्द्रापीड शुकनास के प्रति व्यवहार करता है –

क) शत्रुतुल्य   ख) मित्रवत्

ग) पितृतुल्य   घ) सेवकतुल्य

iii) पुण्डरीक को अच्छोद सरोवर के आश्रम में देख पूर्वजन्म की स्मृति होती है –

क) महाश्वेता को   ख) कादम्बरी को

ग) विदिशा को   घ) जाबालि को

iv) चन्द्रापीड के माता-पिता की आवाज सुन मूर्च्छा से चेतन हो जाती है –

क) कादम्बरी   ख) शुक

ग) विदिशा   घ) महाश्वेता

अभ्यास प्रश्न

1) चन्द्रापीड का चरित्र-चित्रण लिखिए।

2) पुण्डरीक के तीनों जन्मों का उल्लेख करें।

3) महाश्वेता कौन थी? वर्णन कीजिए।

5.5 सारांश

प्रिय छात्रों! इस इकाई में आपने बाणभट्ट और शुकनासोपदेश का परिचय प्राप्त किया।बाणभट्ट कल्पनाओं को रचने में अद्वितीय कौशल रखते थे। शब्दों का औचित्य वे भली-भाँति समझते थे, इसलिये उन्होंने अपनी रचनाओं में शब्दों का प्रयोग कुशल शिल्पकार की तरह किया है। वे विषयों को सूक्ष्मता से देखने की योग्यता रखते थे मानो उन्हें साक्षात् सरस्वती का आशीष हो। कादम्बरी, उनकी इस योग्यता का प्रमाण है। बाणभट्ट ने अपने अनुभव के बल पर अपने पात्रों के माध्यम से जीवन के यथार्थ रूपों को प्रस्तुत कर काव्य रचना के उद्देश्यों को यथासम्भव पूर्ण किया है। बाण ने किसी भी पात्र के वर्णनीय विषयों में पक्षपात नहीं किया है उन्होंने तीनों जन्म में उत्पन्न राजाओं की योग्यताओं का समान रूप से वर्णन किया है। बाण ने जहाँ नायिकाओं के सौन्दर्य का सकुशल वर्णन किया वहीं चाण्डालकन्या के सौन्दर्य की व्याख्या भी की है।

उन्होंने उस समय की राजनीतिक, सामाजिक उदारता और कुरीतियों का वर्णन कर चन्द्रापीड को सम्यक् आचरण का ज्ञान दिया था। बाण के काव्य में मित्र-प्रेम का भी वर्णन देखने को मिलता है। इस प्रकार बाण ने भूत, वर्तमान और भविष्य के लिए कादम्बरी गद्य काव्य रच कर विश्व साहित्य को अमूल्य सम्पत्ति दी है।

5.6 शब्दावली

विस्तृत	–	विस्तीर्ण, फैला हुआ
साहित्यकार	–	साहित्य रचने वाला
प्रतिष्ठित	–	जिसकी प्रतिष्ठा हो, इज्जतदार
वात्सल्य	–	स्नेह, लाड-प्यार, ममता
आग्रह	–	निवेदन
आकृष्ट	–	मोहित होना
कल्याणप्रद	–	कल्याणमय
निष्कपट	–	सीधा, सरल, निश्छल
महिमा	–	गरिमा
भ्रमित	–	डगमगाना, लड़खडाना, भूल करना
अन्धविश्वास	–	अत्यधिक तर्कविहीन विश्वास का करना
साम्राज्यवाद	–	राजा के द्वारा चलाया जाने वाला
शिष्टता	–	नम्रता, विनम्रता
विदीर्ण	–	खण्ड-खण्ड किया हुआ, खोला हुआ
अनुचर	–	पीछे चलने वाला
दुर्बल	–	कमजोर
संवेग	–	मन के भाव

5.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) शुकनासोपदेशः – डा. राजेश्वर प्रसाद मिश्र,अक्षयवट प्रकाशन, इलाहाबाद।
2) कादम्बरी (कथामुख-प्रकरणम्) – तारिणीश झा, रामनारायणलाल अरुणकुमार, इलाहाबाद।
3) संस्कृत साहित्य का इतिहास – डॉ. उमाशंकर शर्मा 'ऋषि',चौखम्बा भारती प्रकाशन,वाराणसी।

5.8 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) i) कादम्बरी बाणभट्ट की रचना है।
   ii) शूद्रक पूर्वजन्म में चन्द्रापीड था।
   iii चन्द्रापीड किन्नरयुगल का पीछा करते हुए अच्छोद सरोवर (हेमकूट) पहँचता है।
   iv) शुकनास राजा तारापीड के मन्त्री थे।
   v) शुकनसोपदेश में लक्ष्मी को परिचय न रखने वाली कहा गया है।

2) (i) गलत ii) गलत (iii) गलत (iv) सही (v) सही

बोध प्रश्न 2

1) (i) निडर (ii) राजकुमार (iii) पुत्र (iv) कादम्बरी (v) चन्द्रापीड

2) (i) सही (ii) गलत (iii) गलत (iv) गलत (v) सही (vi) सही

3) (i) गुरूपदेश (ii) पितृतुल्य (iii) महाश्वेता को (iv)कादम्बरी

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 6 शुकनासोपदेश (लक्ष्मीदोष वर्णन)—भाग 1

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 गद्यांश का अनुवाद – यथा यथा चेयं .... धर्मेन्दुमण्डलस्य।

6.3 सारांश

6.4 शब्दावली

6.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- बाणभट्ट के कथा वैशिष्ट्य के बारे में ज्ञान प्राप्त करेंगे।
- कादम्बरी के 'शुकनासोपदेश' नामक अंश का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- जीवन में लक्ष्मी की भूमिका और उसकी हानि के बारे में जान सकेंगे।
- आपके पाठ्यक्रम से अतिरिक्त अंश का भी ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- बाणभट्ट की वर्णन चातुरी के बारे में व्याख्या कर सकेंगे।
- कतिपय कठिन शब्दों का सरल अर्थ जान सकेंगे।
- कथा लेखन पद्धति में बाणभट्ट के योगदान के विषय में जान सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

इस खण्ड की 5वीं इकाई में आपने महाकवि बाणभट्ट का परिचय प्राप्त किया। आपने यह भी जाना कि बाणभट्ट संस्कृत साहित्य के मूर्धन्य कथाकार हैं। विद्वानों के मध्य एक जनश्रुति है कि वाणी ने अपने प्रभाव को फैलाने के लिये बाण के रूप में अवतार लिया था **(वाणी बाणो बभूव ह)** । बाणभट्ट की कादम्बरी पूर्वार्ध और उत्तरार्ध दो भागों में विभक्त है। इसका प्रारम्भ राजा शूद्रक के वर्णन से प्रारम्भ होता है। राजा एक दिन अपनी राजसभा में बैठा था, तभी एक चाण्डालकन्या सोने के पिंजरे में बन्द एक तोते को लेकर उपस्थित होती है। वह शुक राजा को आशीर्वाद देता है। तोते की वाणी को सुनकर राजसभा के सभी लोग आश्चर्यचकित हो जाते हैं और उससे अपना जीवन परिचय बताने को कहते हैं। शुक अपना जीवन परिचय बताने के बहाने लम्बी कथा कहता है। शुक द्वारा कही गई यह कथा शूद्रक से ही सम्बद्ध होती है और यह उनके तीन जन्मों का अवगाहन करती है। कादम्बरी को आचार्यों ने कथा की कोटि में स्थापित किया है। कथा कवि की कल्पना से प्रसूत महत्त्वपूर्ण कृति को कहते हैं।

आपके पाठ्यक्रम में कादम्बरी के शुकनासोपदेश नामक पाठ्य का एक अंश निर्धारित है। इसकी कथा इस प्रकार है कि अवन्ती क्षेत्र में अनेक विशेषताओं से युक्त उज्जयिनी नगरी में तारापीड नामक एक राजा राज्य करता था। उस राजा का मन्त्री शुकनास नामक

महाविद्वान् ब्राह्मण था। राजा को संसार के सभी सुख प्राप्त थे किन्तु उसके कोई सन्तान नहीं थी। इसी चिन्ता से राजा तारापीड और उसकी रानी विलासवती दुःखी रहते थे। एक दिन राजा ने स्वप्न देखा कि पूरा चन्द्रमण्डल उसकी रानी के शरीर में प्रवेश कर गया। उसके कुछ ही दिन बाद महारानी गर्भवती हो गई और एक तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया। जन्मसंस्कार आदि करने के बाद राजा ने अपने स्वप्न के अनुरूप उस पुत्र का नाम ''चन्द्रापीड'' रखा । इसी समय राजा के मन्त्री शुकनास को भी पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई और शुकनास ने अपने पुत्र का नाम ''वैशम्पायन'' रखा।

राजा ने चन्द्रापीड और वैशम्पायन की शिक्षा की व्यवस्था की। दोनों ने गुरुकुल में जाकर शिक्षा ग्रहण की। शिक्षा ग्रहण के अनन्तर जब वह नगर को लौटा तो प्रजाजनों ने उनका स्वागत किया। राजभवन में पहुँचकर चन्द्रापीड ने अपने पिता को प्रणाम किया। पिता की आज्ञा से वह माता से मिलने के लिये अन्तःपुर में गया। कुछ ही दिन बाद तारापीड ने सोचा कि अब चन्द्रापीड को अपने राज्य का युवराज होना चाहिये। उसने उसके यौवराज्याभिषेक की तैयारी शुरू कर दी। इस प्रसंग में चन्द्रापीड महामन्त्री शुकनास के पास पहुँचा। शुकनास अनुभवी और महान् विद्वान् महामन्त्री था, उसने युवराज बनने से पहले चन्द्रापीड को यौवन, लक्ष्मी और राजमद के विषय में लम्बा किन्तु महत्त्वपूर्ण उपदेश दिया।

शुकनास द्वारा दिया गया यह उपदेश भारतीय जीवन दर्शन का सार है। वह प्रत्येक व्यक्ति के लिये अत्यन्त उपयोगी है। यह कथा के माध्यम से मानव जीवन को समग्रता प्रदान करने के लिए बाणभट्ट के द्वारा प्रदर्शित महान् मार्ग है, जीवन के प्रशस्ति का परम सोपान है और भोगों के नियन्त्रण की महान् शृंखला है। यह राजधर्म का शाश्वत सिद्धान्त भी है। आपके परिज्ञान के लिये उस उपदेश का कुछ अंश सार रूप में यहाँ प्रस्तुत है।

शुकनास ने कहा –

पुत्र चन्द्रापीड ! तुम सभी ज्ञातव्य विषयों के ज्ञाता हो। तुम्हें समस्त शास्त्रों का परिज्ञान है, अतः तुम्हारे लिए उपदेश योग्य कोई विषय नहीं है परन्तु स्वभाव से ही युवावस्था के प्रभाव से उत्पन्न अन्धकार सूर्य के प्रकाश से भेदा नहीं जा सकता, रत्नों की चमक से मिटाया नहीं जा सकता तथा दीपक की प्रभा से दूर नहीं किया जा सकता है। लक्ष्मी से उत्पन्न मद बहुत ही दारुण होता है तथा वृद्धावस्था में भी शान्त नहीं होता । ऐश्वर्यरूपी तिमिर रोग से उत्पन्न अन्धत्व अत्यधिक कष्टप्रद होता है तथा अंजन की शलाका से भी असाध्य होता है।

दर्प रूपी दाहज्वर से उत्पन्न ऊष्मता को अत्यधिक तीक्ष्ण तथा शीतल उपचार से भी दूर नहीं किया जा सकता। विषय रूपी विष का आस्वादन करने से उत्पन्न मोह सर्वदा विषम होता है तथा जड़ी बूटियों और मन्त्रों से भी उसका निवारण नहीं किया जा सकता। राग रूपी मल का अवलेप नित्य स्नान और शौच कार्यों से भी दूर नहीं किया जा सकता। राज्य-सुखों के समूह से उत्पन्न (न टूटने वाली राज्यसुख रूपी सन्निपात रोग से उत्पन्न) निद्रा निरन्तर रहने वाली, रात्रि के बीत जाने पर भी न टूटने वाली तथा (अत्यधिक) घोर है इसीलिए मैं विस्तारपूर्वक तुम्हें कुछ कहना चाहता हूँ।

जन्म से ही प्राप्त प्रभुत्व, अभिनव युवावस्था, अनुपम सौन्दर्य तथा अलौकिक शक्ति सम्पन्नता, यह सब निश्चय ही अनर्थों की बहुत लम्बी पंक्ति है। इसमें से एक भी (सब प्रकार की) उद्दण्डताओं का घर होती है, तो फिर इन सबसे मिले हुए समूह के विषय में तो कहना ही क्या ? युवावस्था के प्रारम्भ में शास्त्र रूपी जल के द्वारा प्रक्षालन करने से निर्मल हुई बुद्धि प्रायः कलुषता को प्राप्त कर जाती है। श्वेतता को त्यागे बिना भी युवकों की दृष्टि लालिमा से पूर्ण रहती है। जिस प्रकार आँधी धूलि के द्वारा भ्रान्ति उत्पन्न करके सूखे

पत्ते को अपनी इच्छा से बहुत दूर ले जाती है, उसी प्रकार युवावस्था में प्रकृति रजोगुण से भ्रान्ति उत्पन्न करके पुरुष को अपनी इच्छा से बहुत दूर तक ले जाती है और सर्वदैव इन्द्रिय रूपी मृगों को आकृष्ट करने वाली यह उपभोग रूपी मृगतृष्णा अत्यधिक दुःखदायी अन्त वाली है। जिस प्रकार (आंवला आदि खाने से) कसैले स्वाद वाले व्यक्ति को वही (पहले पिया हुआ) जल पुनः आस्वादन किए जाने पर पहले से अधिक मीठा लगता है उसी प्रकार नवयौवन से कसैले अन्तःकरण वाले मन को उन्हीं विषयों का स्वरूप (जो पहले बाल्यावस्था में भी विद्यमान थे) पुनः आस्वादन किए जाने पर पहले की अपेक्षा अधिक मधुर लगते हैं। जिस प्रकार मार्गान्तर में पहुँचा देने वाला दिशाओं का भ्रम व्यक्ति को नष्ट कर देता है उसी प्रकार उन्मार्ग में प्रवृत्त करने वाले विषयों में अत्यधिक आसक्ति व्यक्ति का नाश कर देती है।

आप जैसे व्यक्ति ही उपदेशों के (योग्य) पात्र होते हैं क्योंकि जिस प्रकार चन्द्रमा की किरणें मल-रहित स्फटिकमणि में बहुत ही सरलता से प्रवेश करती हैं उसी प्रकार राग आदि मल से रहित मन में उपदेशवचन बहुत सरलता से प्रवेश करते हैं। जिस प्रकार कानों में स्थित थोड़ा सा पवित्र जल (व्यक्ति के कान में) अत्यधिक पीड़ा को उत्पन्न करता है उसी प्रकार दुष्ट-व्यक्ति के कान में स्थित (सुना गया) गुरु का पवित्र उपदेशवचन भी बहुत पीड़ा को उत्पन्न करता है। परन्तु सज्जन व्यक्ति के प्रसङ्ग में वही जल उसके मुख की शोभा को द्विगुणित कर देता है। यथा शङ्खों का आभूषण हाथी के मुख की शोभा को बढ़ा देता है। गुरु का उपदेश सन्ध्याकालीन चन्द्रमा के समान दोषों से उत्पन्न सम्पूर्ण अतिमलिन अन्धकार को दूर कर देता है। शान्ति का मूल कारण रूप गुरु का उपदेश वृद्धावस्था के समान केशसमूह को सफेद करता हुआ, दोषसमूह को पवित्र करता हुआ, गुण रूप में परिणत कर देता है।

विषय-रस का आस्वादन न करने वाले तुम्हारे लिए उपदेश का यही उपयुक्त समय है क्योंकि कामदेव के बाणों के प्रहारों से खण्डित हुए हृदय में गुरु द्वारा दिया गया उपदेश चलनी में जल की भाँति नहीं रुकता। दुष्ट स्वभाव वाला व्यक्ति अपने वंश अथवा शिक्षा से नम्रता को प्राप्त नहीं करता अपितु वह इनसे अविनय को ही प्राप्त करता है। क्या चन्दन से उत्पन्न अग्नि नहीं जलाती ? बुझाने में समर्थ जल के द्वारा भी क्या समुद्र की अग्नि अधिक प्रबल नहीं हो जाती ? गुरु का उपदेश निश्चय ही मनुष्यों के समस्त मलों को दूर करने में समर्थ जल-रहित स्नान है। बालों के पकने से (श्वेत होने से) उत्पन्न हुई कुरूपता तथा बुढ़ापे से रहित यह वृद्धत्व है। मेदा-दोष का आरोपण किए बिना यह महत्त्व प्रदान करने वाला है। सुवर्ण से अनिर्मित तथा ग्राम्यदोष से मुक्त यह (उपदेश) कानों का आभूषण है। चमक से रहित यह प्रकाश करने वाला है। उद्वेग उत्पन्न किए बिना यह जागृति है। (ऐसा उपदेश) विशेष रूप से राजाओं के लिए (उपयोगी) है क्योंकि उन लोगों को उपदेश देने वाले बहुत कम होते हैं। भय के कारण मनुष्य राजा के वचनों का प्रतिध्वनि की तरह अनुगमन करते हैं। अत्यन्त उत्कट अभिमान रूपी सूजन से बन्द हुए कर्णविवर वाले यह (राजा) लोग उपदेश किए वचन को नहीं सुनते हैं तथा सुनते हुए भी वह हाथी की बन्द नेत्रों वाली दृष्टि जैसे (उपेक्षा भाव) से तिरस्कृत करते हुए हित का उपदेश देने वाले गुरुओं को खिन्न करते हैं। अहंकार रूपी दाहक ज्वर से उत्पन्न मूर्च्छा से अन्धकार युक्त वह राज-स्वभाव निश्चय ही व्याकुल रहने वाला है। धन-वैभव, झूठे अभिमान तथा उन्माद को उत्पन्न करने वाले होते हैं (तथा) राज लक्ष्मी राज्य रूपी विष से उत्पन्न आलस्य को देने वाली है।

कल्याण के अभिलाषी आप सर्वप्रथम लक्ष्मी को ही देखें। वीर सैनिकों की तलवारों के मण्डल रूपी कमल-वन में विहार करने वाली यह लक्ष्मी सहवास के परिचय के कारण विरह समय

में विनोद के चिह्न रूप में कल्पवृक्ष के पल्लवों से राग (अनुराग) को, चन्द्रमा की कला से एकान्त टेढ़ेपन को, उच्चैःश्रवा घोड़े से चंचलता को, कालकूट विष से मोहित करने वाली शक्ति को, मदिरा से मद को, कौस्तुभमणि से अत्यधिक कठोरता आदि लक्षणों को लेकर मानो क्षीर-सागर से बाहर निकली हो। इस संसार में इतने अपरिचित स्वभाव वाली अन्य कोई (वस्तु) नहीं जितनी कि यह दुष्टा लक्ष्मी है। प्राप्त कर लिए जाने पर भी निश्चय ही दुःख से रक्षित की जाती है। दृढ़ गुणरूपी बन्धन से निश्चल किए जाने पर भी नष्ट हो जाती है। उत्कट अहंकार से युक्त सहस्रों वीर सैनिकों की दमदमाती हुई तलवारों रूपी लतापंजर में रखी जाने पर भी भाग जाती है। मदजल रूपी वर्षा के दिन से अन्धकार उत्पन्न करने वाले हाथियों के द्वारा बनाए गए सघन समूह में रक्षित किए जाने पर भी भाग जाती है। यह लक्ष्मी परिचय की रक्षा नहीं करती। उच्चकुल को नहीं देखती। सौन्दर्य को नहीं देखती। वंशपरम्परा का अनुसरण नहीं करती। शास्त्र ज्ञान को नहीं सुनती। धर्म का अनुरोध नहीं करती। त्याग का आदर नहीं करती। विशेषता का विचार नहीं करती। आचार की रक्षा नहीं करती। सत्य को नहीं जानती। (सामुद्रिक) लक्षणों को प्रमाण नहीं मानती। गन्धर्वनगर की पंक्ति के समान देखते ही देखते नष्ट हो जाती है।

आज भी मन्दराचल द्वारा घुमाए जाने से उठी हुई भँवर से उत्पन्न भ्रान्ति के संस्कार वाली यह लक्ष्मी परिभ्रमण करती रहती है। कमलिनियों में संचरण के संसर्ग से मानो लगे हुए कमलदण्ड के काँटों से क्षत हुई यह लक्ष्मी कहीं पर भी स्थिरता से पैर नहीं रखती। परमेश्वरों अर्थात् महा धनिकों के घरों में अत्यधिक प्रयत्न से रखी जाने पर भी यह मानो विविध गन्धगजों के कपोलों से बहने वाले मधु के पान से उन्मत्त हुई स्खलन कर जाती है। कठोरता सीखने के लिए ही मानो तलवार की धाराओं में निवास करती है। विश्वरूप को मानो ग्रहण करने के लिए इसने नारायण के शरीर का आश्रय लेती है। अविश्वास के आधिक्य के कारण यह लक्ष्मी अच्छी प्रकार से बढ़े हुए मूल, दण्ड, कोश तथा मण्डल से युक्त भी राजा को सन्ध्याकालीन कमल के समान छोड़ देती है। लता की भाँति विटपों (विट=शाखा, प= रक्षा करने वाले वृक्षों अथवा बिटप=भाण्ड आदि नीच पुरुषों) का आश्रय लेती है। गङ्गा की भाँति (यह लक्ष्मी) वसुओं (आठ वसु अथवा द्रव्यों) की जननी होने पर भी तरङ्गों और बुलबुलों के समान चंचल है।

अनेक राशियों में संक्रमण करने वाले सूर्य की गति के समान यह लक्ष्मी विविध प्रकार की वस्तुओं के साथ सम्बन्ध की इच्छा करती है। अन्धकार से युक्त पाताल की गुफा के समान यह लक्ष्मी तमोगुण से युक्त है। भीम के साहस मात्र से आकृष्ट हृदय वाली हिडिम्बा के समान (यह लक्ष्मी भी भीम तथा साहसिक कार्यों से ही आकृष्ट होती है) है । क्षण-भङ्गुर विद्युत् को उत्पन्न करने वाली वर्षा के समान – यह लक्ष्मी शीघ्र ही समाप्त हो जाने वाली चमक को उत्पन्न करती है। दुष्ट राक्षसी के समान यह लक्ष्मी अनेकानेक व्यक्तियों की उन्नति दिखाकर अल्पबुद्धि से युक्त व्यक्ति को उन्मत्त बना देती है। सरस्वती द्वारा स्वीकृत व्यक्ति का मानो ईर्ष्या के कारण आलिङ्गन नहीं करती। गुणवान् व्यक्ति को मानो अपवित्र जानकर स्पर्श नहीं करती। उदार स्वभाव वाले व्यक्ति को मानो अशुभ जानकर अधिक सम्मान नहीं देती। सज्जन व्यक्ति को मानो अपशकुन समझ कर नहीं देखती। उच्चकुल में उत्पन्न व्यक्ति को मानो सर्प समझकर लाँघ जाती है। शौर्य युक्त व्यक्ति को मानो काँटा समझकर छोड़ देती है। दीन व्यक्ति को मानो बुरा स्वप्न जानकर उसके समीप नहीं जाती। मनस्वी व्यक्ति को पागल समझ कर उस पर हँसती है।

परस्पर विरोधी अपने स्वभाव को मानो इन्द्रजाल (जादू) की तरह दिखाती हुई संसार में अपने चरित्र को प्रकट करती है। उदाहरण के लिए (यह लक्ष्मी) निरन्तर ऊष्मा (= दर्प) का आरोपण करती हुई भी शीतलता (जड़ता=मूर्खत्व) को उत्पन्न करती है। उन्नति को प्रदान

करती हुई भी नीच स्वभाव को प्रकट करती है। समुद्र से उत्पन्न होने पर भी तृष्णा (=इच्छा) को बढाती है । ईश्वरत्व को धारण करती हुई भी अमंगल स्वभाव का प्रसार करती है। शक्ति की वृद्धि को उत्पन्न करती हुई भी क्षुद्रता प्रदान करती है। अमृत की सहोदरा होने पर भी यह परिणाम में कटु है। शरीर धारिणी होने पर भी प्रत्यक्ष नहीं दिखाई देती। भगवान् विष्णु में आसक्त होते हुए भी दुष्ट लोगों से प्रेम करती है। धूलि से युक्त (आँधी) के समान रजोमयी यह लक्ष्मी स्वच्छ वस्तु को भी कलुषित कर देती है।

इस प्रकार बाणभट्ट के द्वारा कादम्बरी के शुकनासोपदेश के अन्तर्गत जिन तथ्यों को प्रतिपादित किया गया है, उन्हें आपकी जानकारी के लिये यहाँ संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है। इसके आगे का अंश आपके पाठ्यक्रम में निर्धारित है जिसका अध्ययन आप विस्तार से करेंगे।

6.2 गद्यांश का अनुवाद– यथा यथा चेयं .... धर्मेन्दुमण्डलस्य।

यथा यथा चेयं चपला दीप्यते तथा तथा दीपशिखेव कज्जलमलिनमेव कर्म केवलमुद्वमति। तथाहि। इयं संवर्धनवारिधारा तृष्णाविषवल्लीनाम्, व्याधगीतिरिन्द्रियमृगाणाम्, परामर्शधूमलेखा सच्चरितचित्राणाम्, विभ्रमशय्या मोहदीर्घनिद्राणाम्, निवासजीर्णवलभी धनमदपिशाचिकानाम्, तिमिरोद्गतिः शास्त्रदृष्टीनाम्, पुरःपताका सर्वाविनयानाम्, उत्पत्तिनिम्नगा क्रोधावेगग्राहाणाम् आपानभूमिर्विषयमधूनाम्, सङ्गीतशाला भ्रूविकारनाट्यानाम्, आवासदरी दोषाशीविषाणाम्, उत्सारणवेत्रलता सत्पुरुषव्यवहाराणाम्, अकालप्रावृड् गुणकलहंसकानाम्, विसर्पणभूमिर्लोकापवाद विस्फोटकानाम्, प्रस्तावना कपटनाटकस्य, कदलिका कामकारिणः, वध्यशाला साधुभावस्य, राहुजिह्वा धर्मेन्दुमण्डलस्य।

शब्दार्थ –**यथा यथा** = जैसे-जैसे, **इयम्** = यह लक्ष्मी, **चपला** = चंचला, **दीप्यते** = दीप्त होती है, **तथा तथा** = वैसे-वैसे, **दीपशिखेव** = दीपक की शिखा के समान, **कज्जलमलिनम्** = काजल के समान मलिन, **कर्म** = कर्म को, **उद्वमति** = प्रकट करती है। **इयम्** = यह लक्ष्मी, **तृष्णाविषवल्लीनाम्** = तृष्णारूपी विषलताओं को बढ़ाने वाली, **व्याधगीतिरिन्द्रियमृगाणाम्** = इन्द्रियरूपी मृगों को विवश करने वाला बहेलियों का गीत, **संवर्धनवारिधारा** = बढ़ाने वाली जलधारा, **सच्चरितचित्राणाम्** = सच्चरितरूपी चित्रों को, **परामर्शधूमलेखा** = आवृत करने वाली धूमलेखा, **मोहदीर्घनिद्राणाम्** = मोहरूपी दीर्घ निद्रा के लिये, **विभ्रमशय्या** = विलास शयन, **धनमदपिशाचिकानाम्** = धन और मदरूपी पिशाचिनियों के, **निवासजीर्णवलभी** = रहने के लिये जीर्णशीर्ण अटारी, **शास्त्रदृष्टीनाम्** = शास्त्रज्ञानरूपी दृष्टि से युक्त लोगों के लिये, **तिमिरोद्गतिः** = मोतियाबिन्द जैसा रोग, **सर्वाविनयानाम्** = समस्त उद्दण्डताओं, **पुरःपताका** = आगे चलने वाली पताका, **क्रोधावेगग्राहाणाम्** = क्रोध के आवेगरूपी मगरमच्छों की, **उत्पत्तिनिम्नगा** = उत्पत्तिस्थानरूपी नदी, **विषयमधूनाम्** = सुखरूपी मदिराओं के, **आपानभूमिः** = पान करने का स्थान, मदिरालय, **भ्रूविकारनाट्यानाम्** = भ्रकुटिविकाररूपी नाटकों की, **सङ्गीतशाला** = रङ्गभूमि है, **दोषाशीविषाणाम्** = दोषरूपी सर्पों की, **आवासदरी** = निवास करने की गुफा, **सत्पुरुषव्यवहाराणाम्** = सज्जन पुरुषों के व्यवहारों को, **उत्सारणवेत्रलता** = दूर करने वाली बेंत की छड़ी, **गुणकलहंसकानाम्** = गुणरूपी कलहंसों को भगाने वाली, **अकालप्रावृड्** = असमय वृष्टि, **लोकापवादविस्फोटकानाम्** = लोकनिन्दारूपी फोड़ों को, **विसर्पणभूमिः** = फैलाने वाली भूमि, **कपटनाटकस्य** = कपटरूपी नाटक की, **प्रस्तावना** = भूमिका, **कामकरिणः** = कामरूपी हाथी का प्रियभक्षणरूप, **कदलिका** = केले का पौधा, **साधुभावस्य**

= सज्जनता के भाव की, **वध्यशाला** = वध भूमि, **धर्मेन्दुमण्डलस्य** = धर्मरूपी चन्द्रमा के मण्डल को ग्रसने वाली, **राहुजिह्वा** = राहु की जीभ।

संस्कृत शब्दार्थ – **यथा यथा** = येन येन प्रकारेण, **इयम्** = एषा, **चपला** = चंचला, **दीप्यते** = स्फुरति, **तथा तथा** = तेन तेन प्रकारेण, **दीपशिखा** = प्रदीपार्चिः, इव, **कज्जलमलिनं** = कज्जलम् = अंजनम् इव मलिनम् = मलीमसम्, **कर्म** = क्रियाम्, एव, **उद्वमति** = उद्गिरति। यथा दीपशिखा कज्जलमेव प्रसूते तथैवेयं लक्ष्मीः कज्जलमलिनं दुष्कर्मादिकं जनयति। **तथा हि इयं** = लक्ष्मी, **तृष्णाविषवल्लीनां** = लिप्सारूपविषलतानां, **संवर्धनवारिधारा** = विस्तारणजलधारा, **इन्द्रियमृगाणाम्** = इन्द्रियहरिणानां, **व्याधगीतिः** = मृगेयुगानं, यथा व्याधाः स्वमधुरगीतैः मृगानाकृष्य तेषां प्राणान् हरन्ति तथैव इयं लक्ष्मीः अपि इन्द्रियाणि विषयाभिमुखानि विधाय लोकान् नाशयति। **सच्चरितचित्राणाम्** = सच्चरितानि – सुवृत्तानि एव चित्राणि –आलेख्यानि तेषाम्, **परामर्शधूमलेखा** = आवरणधूमलेखा, यथा धूमलेखा शनैः शनैः चित्राणि आवृतानि कृत्वा विनाशयति तथैव इयमपि शनैः शनैः सच्चरितानि विनाशयति।

अनुवाद – जैसे जैसे यह लक्ष्मी प्रदीप्त होती है वैसे वैसे ही दीपक की लौ की भाँति काजल के समान मलिन कर्मों को उगलती है। क्योंकि तृष्णा रूपी-लताओं को बढ़ाने के लिए यह जल की धारा है। इन्द्रिय रूपी मृगों के लिए (यह) शिकारी का गीत है। सुन्दर चरित्र रूपी चित्रों को मिटाने के लिए यह धुएँ की पंक्ति के समान है। मोह रूपी दीर्घनिद्रा के लिए यह विलासशय्या है। ऐश्वर्यमद रूपी पिशाचिनियों के लिए यह जीर्ण शीर्ण अट्टालिकाओं वाला निवास स्थान है। शास्त्र रूपी नेत्रों के लिए यह 'तिमिर' नामक रोग की उत्पत्ति है। यह लक्ष्मी सब प्रकार की दुष्टताओं की पुरः पताका है। क्रोध के आवेग रूपी ग्रहों को जन्म देने वाली नदी है। विषयवासना रूपी मदिरा की पानभूमि है । भ्रूविकार रूपी अभिनय की संगीतशाला है। दोष रूपी विषैले साँपो के निवास करने की गुफा है । सज्जन पुरुषों के व्यवहारों को दूर करने के लिए वेत्रलता है। गुणरूपी कलहंसों को दूर करने के लिए अकाल वर्षा है। लोकनिन्दा रूपी विस्फोटकों के फैलने के लिए (यह अनुकूल) स्थान है। कपट रूपी नाटक की प्रस्तावना है। काम रूपी हाथी के लिए कदली-वन है। साधु-भावों के लिए यह वध्यशाला है। धर्म रूपी इन्दुमण्डल के लिए यह राहु की जिह्वा है ।

संस्कृत भावार्थ – इयं लक्ष्मीः इन्द्रियाणि विषयाभिमुखानि विधाय चित्तं कलुषीकरोति। शनैः शनैः सच्चरितानि नाशयति। लक्ष्म्याः संसर्गेण पुरुषाणां सदसद्विवेको विनश्यति। सर्वविधधर्माचरणानां विनाशश्च भवति। कामादिविकाराणां प्राबल्येन सर्वाः गुणाः अपयान्ति। विविधनिन्दिताचरणजन्यलोकापवादाः जायन्ते। अपि च चंचलस्वभावा इयं नैकत्र स्थिरतया वासं करोति। आरब्धयौवनेन चन्द्रापीडेन यौवराज्यप्राप्ते अस्मिन् अवसरे एतत् सर्वं चिन्तनीयम् इत्याशयः।

व्याकरणत्मक टिप्पणी – **दीप्यते** – दीप्, लट्,प्र.पु.ए.व.। **उद्वमति** – उत्+वम्, प्र.पु. ए.व.। **उद्गतिः** – उद्+गम्+क्तिन्। **प्रस्तावना** – प्र+स्तु+णिच्+युच्+टाप्। **उत्सारण** – उत्+सृ+णिच्+ल्युट्।

समास– **दीपशिखा** – दीपस्य शिखा = दीपशिखा, तत्पुरुष समास। **कज्जलमलिनम्** – कज्जलम् इव मलिनम्, उपपद समास। **संवर्धनवारिधारा** – वारीणां धारा, षष्ठी तत्पुरुष, संवर्धनाय वारिधारा, चतुर्थी तत्पुरुष। **तृष्णाविषवल्लीनाम्** – विषस्य वल्लयः, विषवल्लयः, षष्ठी तत्पुरुष, तृष्णा एव विषवल्लयः, कर्मधारय । **व्याधगीतिः** – व्याधस्य गीतिः, षष्ठी तत्पुरुष। **इन्द्रियमृगाणाम्** – इन्द्रियाणि एव मृगाः, कर्मधारय। **परामर्शधूमलेखा** – धूमस्य लेखा, षष्ठी तत्पुरुष, परामर्शाय धूमलेखा, चतुर्थी तत्पुरुष। **सच्चरितचित्राणाम्** –

सतां चरितानि, षष्ठी तत्पुरुष, तान्येव चित्राणि, तेषाम्, कर्मधारय। **मोहदीर्घनिद्राणाम्** – मोह एव दीर्घनिद्रा येषां तेषाम्, कर्मधारय गर्भित बहुव्रीहि। **निवासजीर्णवलभी** – जीर्णा चासौ वलभी, कर्मधारय, निवासाय जीर्णवलभी, चतुर्थी तत्पुरुष। **धनमदपिशाचिकानाम्** – धनानां मदाः, षष्ठी तत्पुरुष, धनमदाः एव पिशाचिकाः, तासाम्, कर्मधारय। **तिमिरोद्गतिः** – तिमिरस्य उद्गतिः, षष्ठी तत्पुरुष। **सर्वाविनयानाम्**– सर्वे च ते अविनयाः, कर्मधारय। **उत्पत्तिनिम्नगा** – निम्नं गच्छति इति निम्नगा, उत्पत्त्यै निम्नगा, उपपदगर्भ चतुर्थी तत्पुरुष। **क्रोधावेगग्राहाणाम्** – क्रोधस्य आवेगाः, षष्ठी तत्पुरुष, क्रोधावेगाः एव ग्राहाः, कर्मधारय। **आपानभूमिः** – आपानाय भूमिः, चतुर्थी तत्पुरुष। **विषयमधूनाम्** – विषयाः एव मधूनि, कर्मधारय। **भ्रूविकारनाट्यानाम्** – भ्रुवां विकाराः, षष्ठी तत्पुरुष, भ्रूविकाराः एव नाट्यानि, कर्मधारय। **दोषाशीविषाणाम्** – दोषा एव आशीविषाः, कर्मधारय। **आवासदरी** – आवासाय दरी, चतुर्थी तत्पुरुष। **कपटनाटकस्य** – कपटमेव नाटकम्, कर्मधारय। **कामकरिणः**– कामः एव करी, कर्मधारय। **साधुभावस्य** – साधोः भावः, षष्ठी तत्पुरुष। **धर्मेन्दुमण्डलस्य** – इन्दोः मण्डलम्, षष्ठी तत्पुरुष, धर्म एव इन्दुमण्डलम्, कर्मधारय।

कोश – 1.अप्रत्ययोऽधीनशपथज्ञानविश्वासहेतुषु इत्यमरः। 2. वल्ली तु व्रततिर्लता' इत्यमरः। 3.'विटपः पल्लवे शिङ्गे विस्तारे स्तम्बशाखयोः' इति विश्वः। 4. 'भङ्गस्तरङ्ग ऊर्मिर्वा स्त्रियां वीचिः' इत्यमरः।

अलङ्कार निर्देश – 'यथा यथा चेयं चपला दीप्यते तथा तथा दीपशिखेव कज्जलमलिनमेव कर्म केवलमुद्धमति' यहाँ 'पूर्णोपमा' अलंकार है। 'इयं संवर्धनवारिधारा........राहुजिह्वा' तक सम्पूर्ण गद्यांश में परम्परित रूपक अलङ्कार है।

बोध प्रश्न

1) 'सर्वाविनयानाम्' इस पद में कौन-सा समास है ?

....

....

....

....

....

....

2) शुकनास के पुत्र का क्या नाम था ?

....

....

....

....

....

....

....

3) तारापीड कहाँ का राजा था?

....

....

....

....

....

4) चन्द्रपीड के माता-पिता का क्या नाम था ?

....

....

....

....

....

5) लक्ष्मी ने कठोरता कहाँ से ग्रहण की ?

....

....

....

....

....

6) 'दोषाशीविषाणाम्' शब्द का क्या अर्थ है ?

....

....

....

....

....

अभ्यास प्रश्न

1) 'संवर्धनवारिधारा तृष्णावल्लीनाम्' का तात्पर्य लिखिए।
2) तारापीड ने स्वप्न में क्या देखा ?
3) वैशम्पायन ने चन्द्रापीड को कौन-कौन से मद बताये हैं ?
4) इस इकाई का अभिप्राय अपने शब्दों में लिखिए।
5) इस इकाई के आधार पर लक्ष्मी के दुर्गुणों का वर्णन कीजिए।

6.3 सारांश

प्रस्तुत इकाई में शुकनासोपदेश के अन्तर्गत लक्ष्मीवर्णन शीर्षक से कुछ पाठ्यांश आपके लिये प्रस्तुत किया गया है। बाणभट्ट ने लक्ष्मी का वर्णन करते हुए उसके दोषों को भी प्रस्तुत किया है। उनका कहना है कि यह लक्ष्मी दीपशिखा के समान है । जिस प्रकार दीपशिखा प्रकाश तो करती है किन्तु अपने धूम से कालिमा भी फैलाती है उसी प्रकार लक्ष्मी भी मनुष्य को बुरे कार्यों में प्रवृत्त करती है। यह लक्ष्मी मनुष्य की तृष्णा को भी बढाती है। जैसे-जैसे लक्ष्मी प्राप्त होती जाती है। मनुष्य की और अधिक पाने की लिप्सा बढ़ती जाती है। यह लक्ष्मी इन्द्रियरूपी मृगों को विवश करने के लिये व्याधगीत है। जिस प्रकार बहेलिया मृगों को वशीभूत करने के लिये गीत गाता है और मृग के मोहित होने पर उसे मार देता है, उसी प्रकार लक्ष्मी इन्द्रियरूपी मृगों को अपनी ओर आसक्त करती है तथा मनुष्य का विनाश कर देती है। यह महापुरुषों के सच्चरित्र को उसी प्रकार से आवृत्त कर लेती है, जैसे धूम चित्र को आवृत्त कर लेता है। इस लक्ष्मी के कारण व्यक्ति धन से मतवाला हो जाता है। वह विवेकरूपी नेत्रों को खो देता है। लक्ष्मी के मद से व्यक्ति उद्दण्ड हो जाता है तथा किसी का सम्मान आदि करना भूल जाता है। बाणभट्ट यह भी कहते हैं कि यह लक्ष्मी क्रोध को बढ़ाने वाली मगरमच्छों की जन्मभूमि नदी है। लक्ष्मी का सदुपयोग न करने वाला व्यक्ति लोक निन्दा को प्राप्त करता है और उसे अपयश ही प्राप्त होता है। यह कामदेवरूपी हाथी का प्रिय भक्षण है। जैसे हाथी केले के कोमल पौधे को तोड़कर खा जाता है, उसी प्रकार लक्ष्मी के मद में चूर व्यक्ति अपनी कामनाओं के द्वारा तोड़ दिया जाता है।

6.4 शब्दावली

निम्नगा – नदी

आशीविषः – सर्प

वर्षाकालः – वर्षा का समय

चपला – चंचल

तृष्णाविषवल्ली – तृष्णारूपी विष की लता

व्याधगीतिः – बहेलियों के गीत

विभ्रमशैय्या – विलास शयन

तिमिरोद्गतिः – अन्धकार का उत्पत्ति स्थान

संगीतशाला – रंगभूमि

लोकोपवाद – लोकनिन्दा

कामकरी – कामदेवरूपी हाथी

6.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) कादम्बरी – भावबोधिनी व्याख्या सहित, डॉ. जयशंकर लाल त्रिपाठी, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 1993।

2) कादम्बरी – महोपाध्याय भानुचन्द्रसिद्धचन्द्र कृत टीका सहित, सं. काशीनाथ पाण्डुरङ्ग परब्, निर्णयसागर प्रेस्, बॉम्बे, 1849 (शकाब्द)।

6.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न

1) 'सर्वाविनयानाम्' इस पद में कर्मधारय समास है ।
2) शुकनास के पुत्र का नाम पुण्डरीक था ।
3) तारापीड उज्जयिनी का राजा था।
4) चन्द्रपीड के माता-पिता का नाम तारापीड और विलासवती था।
5) लक्ष्मी ने कठोरता कौस्तुभमणि से ग्रहण की।
6) 'दोषाशीविषाणाम्' शब्द का अर्थ है – दोष रूपी सर्पों की।

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

इकाई 7 शुकनासोपदेश (लक्ष्मीदोष वर्णन) – भाग 2

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 गद्यांश का अनुवाद – न हि तं पश्यामि .... परामृश्यते यशः।

7.3 सारांश

7.4 शब्दावली

7.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

- लक्ष्मी की कठोरता को जान सकेंगे।
- आप यह भी जान सकेंगे कि राजलक्ष्मी व्यक्ति को विनय रहित बनाती है।
- आप यह भी जानेंगे कि यह राजाओं को उदरताहीन कर देती है।
- लक्ष्मी के दुष्प्रभावों को भलीभाँति जान सकेंगे।
- बाणभट्ट की कल्पना प्रौढ़ता से परिचित हो सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रों! पूर्व की इकाई में शुकनासोपदेश के अन्तर्गत लक्ष्मी दोष वर्णन शीर्षक के कुछ पाठ्यांश का आपने अध्ययन किया। वहाँ बाणभट्ट ने लक्ष्मी का वर्णन करते हुए उसके दोषों को भी प्रस्तुत किया है। उनका कहना है कि यह लक्ष्मी दीपशिखा के समान है। जिस प्रकार दीपशिखा प्रकाश तो करती है किन्तु अपने धूम से कालिमा भी फैलाती है उसी प्रकार लक्ष्मी भी मनुष्य को बुरे कार्यों में प्रवृत्त करती है। यह लक्ष्मी मनुष्य की तृष्णा को भी बढाती है। जैसे-जैसे लक्ष्मी प्राप्त होती जाती है, मनुष्य की और अधिक पाने की लिप्सा बढती जाती है। यह लक्ष्मी इन्द्रियरूपी मृगों को विवश करने के लिये व्याधगीत है। जिस प्रकार बहेलिया मृगों को वशीभूत करने के लिये गीत गाता है और मृग के मोहित होने पर उसे मार देता है, उसी प्रकार लक्ष्मी इन्द्रियरूपी मृगों को अपनी ओर आसक्त करती है तथा मनुष्य का विनाश कर देती है। यह महापुरुषों के सच्चरित्र को उसी प्रकार से आवृत कर लेती है, जैसे धूम चित्र को आवृत कर लेता है। इस लक्ष्मी के कारण व्यक्ति धन से मतवाला हो जाता है। वह विवेकरूपी नेत्रों को खो देता है। लक्ष्मी के मद से व्यक्ति उद्दण्ड हो जाता है तथा किसी का सम्मान आदि करना भूल जाता है। बाणभट्ट यह भी कहते हैं कि यह लक्ष्मी क्रोध को बढाने वाली मगरमच्छों की जन्मभूमि नदी है। लक्ष्मी का सदुपयोग न करने वाला व्यक्ति लोक निन्दा को प्राप्त करता है और उसे अपयश ही प्राप्त होता है। यह कामदेवरूपी हाथी का प्रिय भक्षण है। जैसे हाथी केले के कोमल पौधे को तोड़कर खा जाता है, उसी प्रकार लक्ष्मी के मद में चूर व्यक्ति अपनी कामनाओं के द्वारा तोड़ दिया जाता है।

आपने पूर्व इकाई में यह भी पढ़ा है कि अवन्ती क्षेत्र में अनेक विशेषताओं से युक्त उज्जयिनी नगरी में तारापीड नामक एक राजा राज्य करता था। उस राजा का मन्त्री शुकनास नामक महाविद्वान् ब्राह्मण था। राजा को संसार के सभी सुख प्राप्त थे किन्तु उसके कोई सन्तान नहीं थी। इसी चिन्ता से राजा तारापीड और उसकी रानी विलासवती दुःखी रहते थे। एक दिन राजा ने स्वप्न देखा कि पूरा चन्द्रमण्डल उसकी रानी के शरीर में प्रवेश कर गया। उसके कुछ ही दिन बाद महारानी गर्भवती हो गई और एक तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया। जन्मसंस्कार आदि करने के बाद राजा ने अपने स्वप्न के अनुरूप उस पुत्र का नाम ''चन्द्रापीड'' रखा । इसी समय राजा के मन्त्री शुकनास को भी पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई और शुकनास ने अपने पुत्र का नाम ''वैशम्पायन'' रखा।

आपको यह भी ज्ञात है कि राजा ने चन्द्रापीड और वैशम्पायन की शिक्षा की व्यवस्था की। दोनों ने गुरुकुल में जाकर शिक्षा ग्रहण की। शिक्षा ग्रहण के अनन्तर जब वह नगर को लौटा तो प्रजाजनों ने उनका स्वागत किया। राजभवन में पहुँचकर चन्द्रापीड ने अपने पिता को प्रणाम किया। पिता की आज्ञा से वह माता से मिलने के लिये अन्तःपुर में गया। कुछ ही दिन बाद तारापीड ने सोचा कि अब चन्द्रापीड को अपने राज्य का युवराज होना चाहिये। उसने उसके यौवराज्याभिषेक की तैयारी शुरू कर दी। इस प्रसंग में चन्द्रापीड महामन्त्री शुकनास के पास पहुँचा। शुकनास अनुभवी और महान् विद्वान् महामन्त्री था, उसने युवराज बनने से पहले चन्द्रापीड को यौवन, लक्ष्मी और राजमद के विषय में लम्बा किन्तु महत्त्वपूर्ण उपदेश दिया।

आपने यह जान लिया है कि शुकनास द्वारा दिया गया यह उपदेश भारतीय जीवन दर्शन का सार है। यह प्रत्येक व्यक्ति के लिये अत्यन्त उपयोगी है। यह कथा के माध्यम से मानव जीवन को समग्रता प्रदान करने के लिये बाणभट्ट के द्वारा प्रदर्शित महान् मार्ग है, जीवन के प्रशस्ति का परम सोपान है और भोगों के नियन्त्रण की महान् शृंखला है। यह राजधर्म का शाश्वत सिद्धान्त भी है।

शुकनास राजा तारापीड का महामन्त्री है, वह चन्द्रापीड की अवस्था को जानता है। अतः बड़े प्रेम से उससे कहता है कि पुत्र चन्द्रापीड ! तुम सभी ज्ञातव्य विषयों के ज्ञाता हो। तुम्हें समस्त शास्त्रों का परिज्ञान है, अतः तुम्हारे लिए उपदेशयोग्य कोई विषय नहीं है परन्तु स्वभाव से ही युवावस्था के प्रभाव से उत्पन्न अन्धकार सूर्य के प्रकाश से भेदा नहीं जा सकता, रत्नों की चमक से मिटाया नहीं जा सकता तथा दीपक की प्रभा से दूर नहीं किया जा सकता है। लक्ष्मी से उत्पन्न मद बहुत ही दारुण होता है तथा वृद्धावस्था में भी शान्त नहीं होता । ऐश्वर्यरूपी तिमिर रोग से उत्पन्न अन्धत्व अत्यधिक कष्टप्रद होता है तथा अंजन की शलाका से भी असाध्य होता है।

दर्प रूपी दाहज्वर से उत्पन्न ऊष्मता को अत्यधिक तीक्ष्ण तथा शीतल उपचार से भी दूर नहीं किया जा सकता । विषय रूपी विष का आस्वादन करने से उत्पन्न मोह सर्वदा विषम होता है तथा जड़ी बूटियों और मन्त्रों से भी उसका निवारण नहीं किया जा सकता। राग रूपी मल का अवलेप नित्य स्नान और शौच कार्यों से भी दूर नहीं किया जा सकता । राज्य-सुखों के समूह से उत्पन्न (न टूटने वाली राज्यसुख रूपी सन्निपात रोग से उत्पन्न) निद्रा निरन्तर रहने वाली, रात्रि के बीत जाने पर भी न टूटने वाली तथा (अत्यधिक) घोर है। इसीलिए मैं विस्तारपूर्वक तुम्हें कुछ कहना चाहता हूँ।

जन्म से ही प्राप्त प्रभुत्व, अभिनव युवावस्था, अनुपम सौन्दर्य तथा अलौकिक शक्ति-सम्पन्नता, यह सब निश्चय ही अनर्थों की बहुत लम्बी पंक्ति है। इसमें से एक भी (सब प्रकार की) उद्दण्डताओं का घर होती है, तो फिर इन सबसे मिले हुए समूह के विषय में तो कहना

ही क्या ? युवावस्था के प्रारम्भ में शास्त्र रूपी जल के द्वारा प्रक्षालन करने से निर्मल हुई बुद्धि प्रायः कलुषता को प्राप्त कर जाती है। श्वेतता को त्यागे बिना भी युवकों की दृष्टि लालिमा से पूर्ण रहती है । जिस प्रकार आँधी धूलि के द्वारा भ्रान्ति उत्पन्न करके सूखे पत्ते को अपनी इच्छा से बहुत दूर ले जाती है, उसी प्रकार युवावस्था में प्रकृति रजोगुण से भ्रान्ति उत्पन्न करके पुरुष को अपनी इच्छा से बहुत दूर तक ले जाती है और सर्वदैव इन्द्रिय रूपी मृगों को आकृष्ट करने वाली यह उपभोग रूपी मृगतृष्णा अत्यधिक दुःखदायी अन्त वाली है। जिस प्रकार (आंवला आदि खाने से) कसैले स्वाद वाले व्यक्ति को वही (पहले पिया हुआ) जल पुनः आस्वादन किए जाने पर पहले से अधिक मीठा लगता है उसी प्रकार नवयौवन से कसैले अन्तःकरण वाले मन को उन्हीं विषयों का स्वरूप (जो पहले बाल्यावस्था में भी विद्यमान थे) पुनः आस्वादन किए जाने पर पहले की अपेक्षा अधिक मधुर लगते हैं। जिस प्रकार मार्गान्तर में पहुँचा देने वाला दिशाओं का भ्रम व्यक्ति को नष्ट कर देता है उसी प्रकार उन्मार्ग में प्रवृत्त करने वाले विषयों में अत्यधिक आसक्ति व्यक्ति का नाश कर देती है।

प्रस्तुत इकाई में आप बाणभट्ट द्वारा वर्णित लक्ष्मी के अन्य दुर्गुणों को पढ़ेंगे। बाणभट्ट कहते हैं कि यह लक्ष्मी राजाओं को बलात् पकड़ती है और उन्हें समस्त अविनयों का अधिष्ठान बना देती है। राज्याभिषेक के समय ही मंगलकलशों के जल से इन राजाओं की उदारता धो दी सी जाती है। अग्नि के धूम से हृदय भी मलिन कर दिया जाता है। पुरोहितों के कुश से बनी सम्मार्जनी से मानो इनकी क्षमाशीलता साफ कर दी जाती है। इन्हें अपने आने वाले वार्धक्य का भी स्मरण नहीं रहता है। मानो चामर की हवा से इनकी सत्यवादिता उड़ा दी जाती है। इस प्रकार इस इकाई में आप लक्ष्मी के कतिपय अन्य दुर्गुणों को भी पढ़ेंगे।

7.2 गद्यांश का अनुवाद – न हि तं पश्यामि .... परामृश्यते यशः।

न हि तं पश्यामि यो ह्यपरिचितयानया न निर्भरमुपगूढः, यो वा न विप्रलब्धः। नियतमियमा लेख्यगतापि चलति, पुस्तमय्यपीन्द्र जालमाचरति, उत्कीर्णापि विप्रलभते, श्रुताप्यभि सन्धत्ते, चिन्तितापि वञ्चयति।

शब्दार्थ – **न** = नहीं, **हि** = निश्चय ही, **तम्** = उस, **पश्यामि** = देखना, **यः** = जो, **अपरिचितया अनया** = इस अपरिचित लक्ष्मी के द्वारा, **न** = नहीं, **निर्भरमुपगूढः** = खूब आलिंगित न किया गया हो। **यः** = जो, **विप्रलब्धः** = ठगा, **न** = नहीं गया हो। **इयम्** = यह लक्ष्मी, **आलेख्यगतापि** = चित्र में चित्रित होती हुई भी, **नियतम्** = निश्चितरूप से, **चलति** = चलती है, **पुस्तमयी** = मिट्टी, लकड़ी या लोहे की बनी हुई भी, **इन्द्रजालम्** = जादूगरी का, **आचरति** = आचरण करती है, **उत्कीर्णापि** = पत्थरों में उकेरी गई भी, **विप्रलभते** = धोखा देती है, **श्रुतापि** = सुनी गई भी, **अभिसन्धत्ते** = कपट करती है, **चिन्तितापि** = सोची गई भी, **वंचयति** = ठगती है।

संस्कृत शब्दार्थ – न हि तं पश्यामि, यो हि अपरिचितया अनया– लक्ष्म्या, न निर्भरमुपगूढः–निर्भरं–गाढं यथास्यात् तथा, न –नैव, उपगूढः–आलिङ्गितः, वा– अथवा, यः, न–नैव, विप्रलब्धः–वंचितः। नियतं – निश्चयम्, इयं– लक्ष्मीः, आलेख्यगतापि– चित्रस्थिता अपि, चलति– अन्यत्र प्रयाति। पुस्तमय्यपि– पुत्तलिकारूपा अपि, इन्द्रजालमाचरति– कुहकमाचरति। उत्कीर्णा अपि – प्रस्तरादौ निस्तक्ष्य रचिता अपि, विप्रलभते – झटिति परित्यज्य वंचयति। श्रुता अपि – कर्णगोचरतां गता अपि, अभिसन्धत्ते – अनुसन्दधाति, चिन्तितापि, वंचयति – प्रतारयति।

अनुवाद – निश्चय ही ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो इस अपरिचिता लक्ष्मी के द्वारा दृढ़ता से आलिङ्गन न किया गया हो, या फिर जो इस लक्ष्मी के द्वारा ठगा न गया हो। यह लक्ष्मी चित्र में चित्रित होने पर भी अपने चांचल्य को नहीं छोड़ती। काष्ठ या मिट्टी से पुतली के रूप में गढ़ी होने पर भी यह जादू का खेल रचती है। उकेरी गई भी यह लक्ष्मी धोखा देती है। सुनी जाने पर भी कपट करती है और सोची जाने पर भी ठग लेती है।

संस्कृत भावार्थ – बाणभट्टः कथयति यत् लोके न कोऽपि तादृशः जनः अवलोक्यते यः जनः अपरिचितया अनया लक्ष्म्या गाढं न आलिंगितः। अथवा तादृशः अपि जनः न अवलोक्यते यः अनया प्रताड़ितः न स्यात्। संसारे प्रायः सर्वान् अपि पुरुषान् कदाचित् इयम् अवश्यमेव आलिंगति। स्वयं च आश्लिष्यति। पश्चाच्च तं पुरुषं सहसा विहाय अन्यं पुरुषम् उपयाति। निश्चयरूपेण इयं लक्ष्मीः चित्रस्थितापि अन्यत्र प्रयाति। मृत्काष्ठादि रचितपुत्तलिकारूपापि इन्द्रजालम् आचरति। उत्कीर्णापि विप्रलभते श्रुतापि प्रतारयति। एतादृश्याः पूर्ववर्णिताः दुराचारायाः लक्ष्म्याः केनापि प्रकारेण उपचारः न भवति। अनया गृहीताः राजानः समाकुलाः भवन्ति। इयं सर्वेषाम् अविनयानाम् उद्गमभूमिः वर्तते। इयं च लक्ष्मीः मंगलकलशजलैः राज्ञाम् औदार्यं प्रक्षालयति। धूमेनेव राज्ञां हृदयं मलिनीकरोति। अतः अस्याः उपभोगः अतीव सावधानतया करणीयः।

व्याकरणत्मक टिप्पणी –**परिचिता** – परि+चि+क्त+टाप्। **उपगूढः** – उप+गूह+क्त। **विप्रलब्धा**– वि+प्र+लभ्+क्त। **आलेख्यम्** – आ+लिख्+ण्यत्। **पुस्तकमयी** – पुस्तक+मयट्+ङीप्।

समास – **आलेख्यगता** – आलेख्यं गता, द्वितीया तत्पुरुष। **अपरिचिता** – न परिचिता, नञ् समास ।

कोश – **पुस्तमयी** – मृदा वा दारुणा वाथ वस्त्रेणाथ चर्मणा।
लोहरत्नैः कृतं वापि पुस्तमित्यभिधियते।। अमरकोशः।

अलंकार निर्देश – उपर्युक्त वर्णन में कवि ने यह कहा है कि यह लक्ष्मी संसार के सभी पुरुषों का कभी ना कभी आलिंगन करती है, अर्थात् उन्हें प्राप्त होती है और फिर अकस्मात् उन्हें छोड़कर दूसरे के पास चली जाती है। अतः यहाँ समासोक्ति अलंकार है।

एवं विधयापि चानया दुराचारया कथमपि दैववशेन परिगृहीताः विक्लवा भवन्ति राजानः, सर्वाविनयाधिष्ठानतां च गच्छन्ति। तथाहि अभिषेकसमय एव चैतेषां मङ्गलकलशजलैरिव प्रक्षाल्यते दाक्षिण्यम्। अग्निकार्यधूमेनेव मलिनीक्रियते हृदयम्, पुरोहितकुशाग्रसम्मार्जनीभिरिव अपह्रियते क्षान्तिः, उष्णीषपट्टबन्धेनेव आच्छाद्यते जरागमनस्मरणम्, आतपत्रमण्डलेनेव अपसार्यते परलोकदर्शनम्, चामरपवनैरिव अपह्रियते सत्यवादिता, वेत्रदण्डैरिव उत्सार्यन्ते गुणाः, जयशब्दकलकलैरिव तिरस्क्रियन्ते साधुवादाः, ध्वजपट पल्लवैरिव परामृश्यते यशः।

शब्दार्थ – **एवं विधयापि** = इस प्रकार की, **दुराचारया अनया** = इस दुराचारिणी लक्ष्मी के द्वारा, **दैववशेन** = भाग्यवश, **परिगृहीताः** = पकड़े गये, अपनाये गये, **राजानः** = राजागण, **विक्लवा** = व्याकुल हो जाते हैं, **सर्वाविनयाधिष्ठानताम्** = समस्त अशिष्ट आचरणों के आश्रय, **अभिषेकसमये** = राज्याभिषेक के समय ही, **मंगलकलशजलैरिव** = मांगलिक कलशों के जल से ही, **प्रक्षाल्यते** = धोया जाता है, **दाक्षिण्यम्** = उदारता, **अग्निकार्यधूमेनेव** = हवन आदि अग्निकार्य के धुएं से, **हृदयम्** = हृदय, **मलिनीक्रियते** = मैला कर दिया जाता है, **पुरोहितकुशाग्रसम्मार्जनीभिरिव** = पुरोहितों के कुशों के अग्रभाग से बनी सम्मार्जनी से मानो, **क्षान्तिः** = शान्ति, क्षमा, **अपह्रियते** = दूर कर दी जाती है,

उष्णीषपट्टबन्धेन = पगड़ी के बन्धन से, **जरागमनस्मरणम्** = वार्धक्य की प्राप्ति का स्मरण, **आच्छाद्यते** = ढँक दिया जाता है, **आतपत्रमण्डलेन** = छत्र के मण्डल से, **परलोकदर्शनम्** = स्वर्ग लोक का दर्शन, **अपसार्यते** = दूर कर दिया जाता है, **चामरपवनैरिव** = चामर की हवा से ही, **सत्यवादिता** = सत्य बोलने का स्वभाव, **अपह्रियते** = दूर कर दिया जाता है। **वेत्रदण्डैरिव** = बेंत के दण्ड के समान, **गुणाः** = धैर्यादि गुण, **उत्सार्यन्ते** = दूर किये जाते हैं, **जयशब्दकलकलैरिव** = जयकारे के कोलाहल द्वारा, **साधुवादाः** = अच्छे गुण, **तिरस्क्रियन्ते** = दूर कर दिये जाते हैं, **ध्वजपटपल्लवैरिव** = ध्वज के वस्त्रों द्वारा, **यशः** = कीर्ति, **परामृश्यते** = पोंछ दी जाती है।

संस्कृत शब्दार्थ – एवं विधया उपरि निर्दिष्टया लक्ष्म्या कथमपि दैववशेन विधिना परिगृहीताः आश्रिताः राजानः विक्लवाः – पर्याकुलाः भवन्ति। अतः ते राजानः सर्वेषाम् अविनयानां–दुर्व्यवहाराणाम् अधिष्ठानताम् आस्पदत्वं च गच्छन्ति। दुर्व्यवहाराः निरूप्यन्ते तथा हि इत्यनेन। एतेषां राज्ञाम् अभिषेकसमये एव दाक्षिण्यम् औदार्यं गच्छति। यथा अभिषेकसमये राजानः मङ्गलकलशजलैः अभिषिच्यन्ते – प्रक्षाल्यन्ते तथा तेषामौदार्यमपि गच्छति। अग्निकार्यधूमेन – अभिषेकाङ्गभूतः यो होमः तस्य धूमेन इव हृदयं मलिनीक्रियते। लोके धूमेन मालिन्यं जायते। अतः एवम् उत्प्रेक्षते। अथ राज्ञां क्षमा नश्यति इति वदति। पुरोहितानां तेषां कुशाग्राण्येव कुशाः कुशाख्यतृणविशेषा तेषामग्रभागा एव सम्मार्जन्यः ताभिरिव क्षान्तिः क्षमागुणः अपनीयते दूरीक्रियते। यथा लोके सम्मार्जनीभिः रेणुः दूरीक्रियते तथेति शेषः। उष्णीषं मूर्धावेष्टनं तदेव पट्टबन्धः क्षौमवसनेन बन्धनं तेन इव जरागमस्मरणं, वृद्धोऽहं भविष्यामि इति चिन्तनम् आच्छाद्यते आव्रियते। यथा लोके वस्त्रेण वस्तु आच्छाद्यते तथेति शेषः। आतपत्रमण्डलम् – आतपत्रस्य छत्रस्य मण्डलं तेन परलोकदर्शनं जन्मान्तरं मम भवेदित्येवं विधं जन्मान्तरदर्शनम् अपवार्यते इव निवार्यते इव। लोके आतपत्रेण उपरितनवस्तु आच्छाद्यते तथा। चामरपवनैः सत्यवादिता सत्यसन्धता अपह्रियते। राजानः सत्यसन्धाः न भवन्ति। यथा लोके पवनैः वस्तु दूरीक्रियते तथा।

अनुवाद – इस प्रकार की इस दुष्टा लक्ष्मी के द्वारा किसी प्रकार भाग्यवश पकड़े गए राजा लोग दुःखी होते हैं तथा सभी प्रकार की उद्दण्डताओं का स्थान बन जाते हैं । उदाहरण के लिए–अभिषेकसमय में ही, मानो इनकी उदारता मङ्गलकलशों के जल से धो दी जाती है, यज्ञ के धुएं से मानो इनका हृदय मलिन कर दिया जाता है। इनका क्षमाभाव मानो पुरोहितों के द्वारा कुश के अग्रभाग से बनाई गई मार्जनियों से दूर कर दिया जाता है। वृद्धावस्था के आगमन का स्मरण मानो पगड़ी रूपी पट्ट के बाँधने से ढँक लिया जाता है। परलोक का दर्शन मानो राजछत्र के मण्डल से रोक लिया जाता है। सत्यवादिता मानो चामर की पवन के द्वारा दूर कर दी जाती है। मानो बेंत के दण्ड के द्वारा गुण भगा दिये जाते हैं, मानो "जय हो! जय हो!" इन शब्दों के कोलाहल द्वारा अच्छे गुण तिरस्कृत कर दिये जाते हैं। मानो ध्वजाओं के वस्त्रों द्वारा राजा की कीर्ति को पोंछकर साफ कर दिया जाता है।

संस्कृत भावार्थ – केचिद् राजानः विह्वलतां चंचलताम् उपयान्ति। कथमित्युच्यते श्रमेति। तथा हि श्रमवशेन दूरोड्डयनादि श्रमाधिक्येन शिथिलं श्लथं यत् शकुनीनां पक्षिणां गलपुटं कण्ठदेशः तद्वत् चपलाभिः तथा खद्योतः ज्योतिरिङ्गणाख्यप्राणिविशेषः तस्य उन्मेषवत् मुहूर्त क्षणकालं मनोहराभिः तथा मनस्विजनाः ज्ञानिनः तैः गर्हिताभिः संपद्भिः धनादिभिः प्रलोभ्यमानाः। धनलवस्याल्पधनादिलाभेन योऽवलेपोऽहङ्कारः तेन विस्मृतानि जन्मानि यैस्ते। अर्थात् अस्मिन् जन्मनि धनादिलाभेन गर्विष्ठाः के वयं कयोरात्मजाः कीदृगवस्थां प्राप्ता इत्यादि भवान् विस्मरन्ति। तथा अनेकदोषोपचितेन रागावेशेन दुष्टेनासृजा रक्तेन इव बाध्यमानाः पीड्यमानाः भवन्ति। विविधा अनेके ये विषयाः तेषां ग्रासेषु ग्रहणेषु लालसैः पंचभिः चक्षुः-श्रोत्र-रसना-घ्राणत्वग्रूपैः

इन्द्रियैरपि विषयाधिक्यात् अनेकसहस्रसंख्यैः इव भासमानैः इन्द्रियैः आयास्यमानाः। तथा च प्रकृत्या चंचलतया चांचल्यस्वभावेन हेतुना लब्धप्रसारण-प्राप्तावकाशेन-विविधविषयव्याप्तेन अतएव एकेनापि विद्यमानेन मनसा विषयाणां बाहुल्यात् सहस्रतां गतेन आकुलीक्रियमाणाः सन्तः विह्वलतां चंचलताम् उपयान्ति।

इदमुक्तं यल्लक्ष्म्या गृहीताः राजानः सर्वेषामविनयानामाश्रयाः भवन्ति। ते दाक्षिण्यादिगुणहीनाः भवन्ति। तेषां हृदयं मलिनं भवति। ते क्षमारहिताः भवन्ति। क्षमा बलमशक्तानां शक्तानां भूषणं क्षमा इत्युक्तिः अस्ति। किन्तु क्षमागुणाः तान् त्यजन्ति। विषयानुरागिणो भूत्वा वार्धक-मुनिवृत्तीनामिति मतं विस्मृत्य ते जीवन्ति। अर्थाद्वार्धक्यमस्माकम् आगतम् अतः परं स्रग्चन्दनवनितादिषु विषयेषु लालसाः न भवाम इति चिन्तां ते परित्यजन्ति। अस्माल्लोकात्परमस्ति परलोकः तत्र सुखमवाप्तुं धर्ममार्गेण जीवेमेह जन्मनीति च विस्मरन्ति। सत्यं ब्रूयादित्यस्माकं धर्मः। परमेते राजानः सत्यवादितां त्यजन्ति।

व्याकरणत्मक टिप्पणी – **परिग्रहीताः** – परि+ग्रह+क्त। **विक्लवाः** – वि+क्लु+अच्। **अधिष्ठानम्** – अधि+स्था+ल्युट्। **क्षान्तिः** – क्षम्+क्तिन्।

समास – **दैववशेन** – दैवस्य वशेन, षष्ठी तत्पुरुष। **मङ्गलकलशजलैः** – मंगलाय कलशाः, चतुर्थी तत्पुरुष, तेषाम् जलैः, षष्ठी तत्पुरुष। **अग्निकार्यधूमेन** – अग्नेः कार्यम्, तस्य धूमेन, षष्ठी तत्पुरुष। **पुरोहितकुशाग्रसम्मार्जनीभिः** – कुशानाम् अग्राः, षष्ठी तत्पुरुष, कुशाग्रैः कृताः सम्मार्जन्यः, तृतीया तत्पुरुष, तैः। **उष्णीषपट्टबन्धेन** – उष्णीषस्य पट्टः, तस्य बन्धेन, षष्ठी तत्पुरुष। **जरागमनस्मरणम्** – जरायाः आगमनम्, तस्य स्मरणेन, षष्ठी तत्पुरुष। **आतपत्रमण्डलेन** – आतपत्रस्य मण्डलेन, षष्ठी तत्पुरुष। **चामरपवनैः** – चामराणां पवनैः, षष्ठी तत्पुरुष।

कोश – **आतपत्र** – छत्रं त्वातपत्रमित्यमरः।

जरा – विस्रसा जरा, इत्यमरः।

अलंकार निर्देश – **''मङ्गलकलशजलैः .... सत्यवादिता''** में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

बोध प्रश्न

1) राजा किसके वशीभूत होकर राजधर्म को भूल जाता है ?

....

....

....

....

....

2) 'अग्निकार्यधूमेनेव मलिनीक्रियते हृदयम्' इस वाक्य का क्या तात्पर्य है ?

....

....

....

....

....

3) राजा 'उष्णीषपट्टबन्धन' से क्या विस्मृत कर देता है ?

....

....

....

....

....

4) 'चामरपवन' किसे उड़ा देता है ?

....

....

....

....

....

5) नियतमियम् आलेख्यगतापि चलति' का तात्पर्य लिखिए।

....

....

....

....

....

6) 'दाक्षिण्य' का क्या अर्थ है ?

....

....

....

....

....

....

अभ्यास प्रश्न

1) लक्ष्मी को कवि ने चंचला क्यों कहा है ?
2) लक्ष्मी के आश्रय से राजाओं की क्या गति होती है ?
3) राजलक्ष्मी राजाओं को अनुदार कैसे बनाती है ?
4) 'सर्वाविनयाधिष्ठानता' से आप क्या समझते हैं ?
5) इस इकाई का सार अपने शब्दों में लिखिए।
6) इस इकाई के आधार पर बाणभट्ट की वर्णनशैली पर प्रकाश डालिए।

7.3 सारांश

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन का सार यह है कि राज्यलक्ष्मी सद्गुणों के साथ-साथ दुर्गुणों का भी अधिष्ठान है। यह किसी भी व्यक्ति को धोखा दिये बिना नहीं छोड़ती, जिसे अपनाती है, कालान्तर में उसी को छोड़कर अन्य पुरुष का आश्रय ले लेती है। बाणभट्ट का कथन है कि अगर लक्ष्मी को चित्रित भी कर दिया जाय तो भी वह अपनी चंचलता को नहीं छोड़ती। यह काठ की पुतली का रूप लेकर के भी जादूगरी करती है। इसे उकेर भी दिया जाये तो भी यह लोगों को ठगती है। इसके नाम श्रवण मात्र से लोग ठगे से रह जाते हैं। भाग्यवश जिसे भी यह मिलती है, वह विकल हो जाता है। अहंकार से दृप्त होकर कोई भी इसके वशीभूत होने के कारण अपने राजधर्म को भूल जाता है और सत्यवादिता, परलोक आदि के ज्ञान को भूल जाता है। वह मतवाला होकर सभी की अवमानना करने लगता है।

निश्चय ही ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो इस अपरिचिता लक्ष्मी के द्वारा दृढ़ता से आलिङ्गन न किया गया हो, या फिर जो इस लक्ष्मी के द्वारा ठगा न गया हो । यह लक्ष्मी चित्र में चित्रित होने पर भी अपने चांचल्य को नहीं छोड़ती। काष्ठ या मिट्टी से पुतली के रूप में गढ़ी होने पर भी यह जादू का खेल रचती है। उकेरी गई भी यह लक्ष्मी धोखा देती है। सुनी जाने पर भी कपट करती है और सोची जाने पर भी ठग लेती है।

इस प्रकार की इस दुष्टा लक्ष्मी के द्वारा किसी प्रकार भाग्यवश पकड़े गए राजा लोग दुःखी होते हैं तथा सभी प्रकार की उद्दण्डताओं का स्थान बन जाते हैं । उदाहरण के लिए–अभिषेकसमय में ही मानो इनकी उदारता मङ्गलकलशों के जल से धो दी जाती है, यज्ञ के धुएं से मानो इनका हृदय मलिन कर दिया जाता है। इनका क्षमाभाव मानो पुरोहितों के द्वारा कुश के अग्रभाग से बनाई गई मार्जनियों से दूर कर दिया जाता है। वृद्धावस्था के आगमन का स्मरण मानो पगड़ी रूपी पट्ट के बाँधने से ढक लिया जाता है। परलोक का दर्शन मानो राजछत्र के मण्डल से रोक लिया जाता है। सत्यवादिता मानो चामर की पवन के द्वारा दूर कर दी जाती है।

7.4 शब्दावली

अपरिचितया अनया	–	इस अपरिचित लक्ष्मी के द्वारा
निर्भरमुपगूढः	–	खूब आलिंगित न किया गया हो
विप्रलब्धः	–	ठगा
आलेख्यगतापि	–	चित्र में चित्रित होती हुई भी
नियतम्	–	निश्चितरूप से
पुस्तमयी	–	मिट्टी, लकड़ी या लोहे की बनी हुई
इन्द्रजालम्	–	जादूगरी
आचरति	–	आचरण करती है
उत्कीर्णापि	–	पत्थरों में उकेरी गई
विप्रलभते	–	धोखा देती है
श्रुतापि	–	सुनी गई
अभिसन्धत्ते	–	कपट करती है

चिन्तितापि – सोची गई
वंचयति – ठगती है
एवं विधयापि – इस प्रकार की
दैववशेन – भाग्यवश
राजानः – राजागण
विक्लवा – व्याकुल हो जाते हैं
अभिषेकसमये – राज्याभिषेक के समय
प्रक्षाल्यते – धोया जाता है
दाक्षिण्यम् – उदारता
हृदयम् – हृदय
क्षान्तिः – शान्ति, क्षमा
आच्छाद्यते – ढँक लिया जाता है
अपसार्यते – दूर कर दिया जाता है
चामरपवनैरिव – चामर की हवा से ही
सत्यवादिता – सत्य बोलने का स्वभाव
अपहि्रयते – दूर कर दिया जाता है

7.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) कादम्बरी – भावबोधिनी व्याख्या सहित, डॉ. जयशंकर लाल त्रिपाठी, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 1993।

2) कादम्बरी – महोपाध्याय भानुचन्द्रसिद्धचन्द्र कृत टीका सहित, सं. काशीनाथ पाण्डुरङ्ग परब्, निर्णयसागर प्रेस्, बॉम्बे, 1849 (शकाब्द)।

7.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न

1) राजा लक्ष्मी के वशीभूत होकर राजधर्म को भूल जाता है ।

2) 'अग्निकार्यधूमेनेव मलिनीक्रियते हृदयम्' इस वाक्य का तात्पर्य है – यज्ञ के धुएं ये मानो इनका हृदय मलिन कर दिया जाता है।

3) राजा 'उष्णीषपट्टबन्धन' से वृद्धावस्था के आगमन को विस्मृत कर देता है ।

4) 'चामरपवन' सत्यवादिता को उड़ा देता है ।

5) नियतमियम् आलेख्यगतापि चलति' का तात्पर्य है – यह लक्ष्मी चित्र में चित्रित होने पर भी अपने चांचल्य के नहीं छोडती।

6) 'दाक्षिण्य' का अर्थ है – उदारता।

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

इकाई 8 शुकनासोपदेश (राजाओं की विभिन्न दशाओं का निरूपण) – भाग 1

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 गद्यांश का अनुवाद – केचित् श्रम .... नावगच्छन्ति।

8.3 सारांश

8.4 शब्दावली

8.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

- बाणभट्ट को अभीष्ट राजा के स्वरूप का परिज्ञान कर सकेंगे।
- काम-क्रोधादि की विनाशशीलता के बारे में जान सकेंगे।
- राजा को क्षुद्र लोगों के साथ नहीं रहना चाहिये, यह जान सकेंगे।
- बाणभट्ट की कथासंघटना शैली का परिचय पा सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! पूर्व इकाई में आपने अध्ययन किया कि राज्यलक्ष्मी सद्गुणों के साथ-साथ दुर्गुणों का भी अधिष्ठान है। यह किसी भी व्यक्ति को धोखा दिये बिना नहीं छोड़ती, जिसे अपनाती है, कालान्तर में उसी को छोड़कर अन्य पुरुष का आश्रय ले लेती है। बाणभट्ट का कथन है कि अगर लक्ष्मी को चित्रित भी कर दिया जाये तो भी वह अपनी चंचलता को नहीं छोड़ती। यह काठ की पुतली का रूप लेकर के भी जादूगरी करती है। इसे उकेर भी दिया जाये तो भी यह लोगों को ठगती है। इसके नाम श्रवण मात्र से लोग ठगे से रह जाते हैं। भाग्यवश जिसे भी यह मिलती है, वह विकल हो जाता है। अहंकार से युक्त होकर कोई भी इसके वशीभूत होने के कारण अपने राजधर्म को भूल जाता है और सत्यवादिता, परलोक आदि के ज्ञान को भूल जाता है। वह मतवाला होकर सभी की अवमानना करने लगता है।

निश्चय ही ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो इस अपरिचिता लक्ष्मी के द्वारा दृढ़ता से आलिङ्गन न किया गया हो, या फिर जो इस लक्ष्मी के द्वारा ठगा न गया हो । यह लक्ष्मी चित्र में चित्रित होने पर भी अपने चांचल्य को नहीं छोड़ती। काष्ठ या मिट्टी से पुतली के रूप में गढ़ी होने पर भी यह जादू का खेल रचती है। उकेरी गई भी यह लक्ष्मी धोखा देती है। सुनी जाने पर भी कपट करती है और सोची जाने पर भी ठग लेती है।

इस प्रकार की इस दुष्टा लक्ष्मी के द्वारा किसी प्रकार भाग्यवश पकड़े गए राजा लोग दुःखी होते हैं तथा सभी प्रकार की उद्दण्डताओं का स्थान बन जाते हैं । उदाहरण के लिए– अभिषेकसमय में ही मानो इनकी उदारता मङ्गलकलशों के जल से धो दी जाती है, यज्ञ

के धुएं से मानो इनका हृदय मलिन कर दिया जाता है। इनका क्षमाभाव मानो पुरोहितों के द्वारा कुश के अग्रभाग से बनाई गई मार्जनियों से दूर कर दिया जाता है। वृद्धावस्था के आगमन का स्मरण मानो पगड़ी रूपी पट्ट के बाँधने से ढक लिया जाता है। परलोक का दर्शन मानो राजछत्र के मण्डल से रोक लिया जाता है। सत्यवादिता मानो चामर की पवन के द्वारा दूर कर दी जाती है।

प्रस्तुत इकाई में आप पढ़ेंगे कि राजा को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। वह नाना प्रकार के लोगों से घिरा रहता है। जो अपने स्वार्थपूर्ति के लिये राजा को पतित भी कर देते हैं। अतः बाणभट्ट राजा को पग-पग पर सावधान करते हुए चलते हैं। बाण का यह वर्णन न केवल राजाओं के लिये अपितु सामान्य मानव के लिये भी उतना ही लाभकारी है।

8.2 गद्यांश का अनुवाद – केचित् श्रम .... नावगच्छन्ति।

केचित् श्रमवशशिथिल-शकुनिगलपुटचपलाभिः खद्योतोन्मेषमुहूर्तमनोहराभिः मनस्विजनगर्हिताभिः सम्पद्भिः प्रलोभ्यमानाः, धनधवलाभावलेपविस्मृत जन्मानः अनेकदोषोपचितेन दोषासृजेव रागावेशेन बाध्यमानाः, विविधविषयग्रासलालसैः पञ्चभिरप्यनेकसहस्त्रसंख्यैः इवेन्द्रियैः आयास्यमानाः, प्रकृतिचञ्चलतायाः लब्धप्रसरेण एकेनापि शतसहस्त्रतामिवोपगतेन मनसा आकुलीक्रियमाणाः विह्वलताम् उपयान्ति।

शब्दार्थ – **केचित्** = कुछ राजा लोग, **श्रमवशशिथिल-शकुनिगलपुटचपलाभिः** = अत्यधिक थकान के कारण लटकी हुई किसी पक्षी की गर्दन के समान हिलने वाली, **खद्योतोन्मेषमुहूर्तमनोहराभिः** = जुगुनू की चमक के समान केवल कुछ देर के लिये चमकने वाली, **मनस्विजनगर्हिताभिः** = स्वाभिमानी मनुष्यों द्वारा निन्दित, **सम्पद्भिः** = सम्पत्तियों के द्वारा, **प्रलोभ्यमानाः** = ललचाए जाते हुए, **धनधवलाभावलेपविस्मृतजन्मानः** = थोड़े से धन को प्राप्त करने के अभिमान के कारण अपने को अजन्मा समझने वाले, **अनेकदोषोपचितेन** = वात–पित्तादि अनेक प्रकार के दोषों से बढ़े हुए, **दुष्टासृजेव** = रक्त के समान, **रागावेशेन** = विषयासक्ति के आवेश से, **बाध्यमानाः** = पीड़ित किये जाते हुए, **विविधविषयग्रासलालसैः** = विविध विषय रूपी ग्रासों की लालसा वाले, **पञ्चभिरप्यनेकसहस्त्रसंख्यैः** = पाँच होती हुई भी जो हजारों की तरह प्रतीत होती हैं, **इवेन्द्रियैः** = ऐसी इन्द्रियों के द्वारा, **आयास्यमानाः** = पीड़ित किये जाते हुए, **प्रकृतिचंचलतायाः** = प्रकृति से चंचल होने के कारण, **लब्धप्रसरेण** = प्रसार प्राप्त करने वाली, **एकेनापि** = एक होकर भी, **सहस्त्रतामिवोपगतेन** = हजारों की तरह प्रतीत होने वाले, **मनसा** = मन के द्वारा, **आकुलीक्रियमाणाः** = व्याकुल किये जा रहे, **विह्वलताम्** = दुःख को, **उपयान्ति** = प्राप्त होते हैं।

संस्कृत शब्दार्थ – केचित् – केचन् राजानः, श्रमवशशिथिल-शकुनिगलपुटचपलाभिः – प्रयासाधिक्येन शिथिलश्लथपक्षिणां कण्ठपुटचंचलाभिः, खद्योतोन्मेषमुहूर्तमनोहराभिः – ज्योतिरिंगणस्य अवभासवत् क्षणिकमनोहराभिः, मनस्विजनगर्हिताभिः – पण्डितलोकैर्निन्दिताभिः, सम्पद्भिः – समृद्धिभिः, प्रलोभ्यमानाः – लोभं प्राप्यमाणाः, धनलवलाभावलेपविस्मृत-जन्मानः – द्रव्यलेशप्राप्त्यहंकार- विस्मृतजन्ममरणादिभिः, अनेकदोषोपचितेन – अनेकदोषव्याप्तेन, दुष्टासृजेव – दूषितरक्तेनेव, रागावेशेन – इच्छारुणिमादिना, बाध्यमानाः – पीड्यमानाः, विविधविषयग्रासलालसैः – नानाशब्दस्पर्शादि इन्द्रियविषयकविषयोपभोगलोलुपैः, पञ्चभिरप्यनेकसहस्त्रसंख्यैः – पञ्चसंख्याकैः चक्षुरादीन्द्रियैरिव बहुसहस्त्रसंख्यैः इव, आयास्यमानाः – परिक्लिष्यमानाः, प्रकृतिचंचलतायाः – स्वभावचपलतायाः, लब्धप्रसरेण – लब्धावकाशेन,

एकेनापि, सहस्त्रतामिवोपगतेन – असंख्यत्वं प्राप्तेन इव, मनसा, आकुलीक्रियमाणाः – व्याकुलीक्रियमाणाः, विह्वलताम् – व्याकुलताम्, उपयान्ति – उपगच्छन्ति।

अनुवाद – श्रम के कारण पक्षियों की शिथिल (ढीली) हुई गर्दन के समान चंचल, जुगुनू की चमक के समान क्षण भर के लिए मन को हरने वाली, मनस्वी लोगों के द्वारा निन्दित सम्पत्तियों के द्वारा प्राप्त किए गए, थोड़े से धन पा जाने के गर्व से जन्म-मरण की परम्परा को भूलकर अपने को अमर मानने वाले, अनेक दोषों के बढने से दूषित रक्त के समान, राग के आवेश से बाध्य किये गये, अनेक प्रकार के विषय रूपी ग्रासों के लोभी, पाँच होते हुए भी अनेक सहस्त्रों की संख्या में प्रतीत होने वाली इन्द्रियों के द्वारा दुःखी किए गए, स्वभाव से चंचल होने के कारण प्रसार को प्राप्त हुए, एक होते हुए भी मानो सहस्त्र की संख्या को प्राप्त हुए मन के द्वारा आकुलित किये गए कुछ राजा लोग व्याकुलता को प्राप्त करते हैं।

संस्कृत भावार्थ – केचित् राजानः विह्वलतां चंचलताम् उपयान्ति। कथमित्युच्यते श्रमेति। तथा हि श्रमावेशेन दूरोड्डयनादि श्रमाधिक्येन शिथिलं श्लथं यत् शकुनीनां पक्षिणां गलपुटं कण्ठदेशः तद्वत् चपलाभिः तथा खद्योतः ज्योतिरिङ्गणाख्यप्राणिविशेषः तस्य उन्मेषवत् मुहूर्त क्षणकालं मनोहराभिः तथा मनस्विजनाः ज्ञानिनः तैः गर्हिताभिः सम्पद्भिः धनादिभिः प्रलोभ्यमानाः। धनलवस्याल्पधनादिलाभेन योऽवलेपोऽहङ्कारः तेन विस्मृतानि जन्मानि यैस्ते। अर्थात् अस्मिन् जन्मनि धनादिलाभेन गर्विष्ठाः के वयं कयोरात्मजाः कीदृगवस्थां प्राप्ता इत्यादिकं विस्मरन्ति। तथा अनेकदोषोपचितेन रागावेशेन दुष्टेनासृजा रक्तेन इव बाध्यमानाः पीड्यमानाः भवन्ति। विविधा अनेके ये विषयाः शब्दस्पर्शादयः तेषां ग्रासेषु ग्रहणेषु लालसैः पंचभिः चक्षुः-श्रोत्र-रसना-घ्राणत्वग्रूपैः इन्द्रियैरपि विषयाधिक्यात् अनेकसहस्त्रसंख्यैः इव भासमानैः इन्द्रियैः आयास्यमानाः। तथा च प्रकृत्या चंचलतया चांचल्यस्वभावेन हेतुना लब्धप्रसारण प्राप्तावकाशेन – विविधविषयव्याप्तेन अतएव एकेनापि विद्यमानेन मनसा विषयाणां बाहुल्यात् सहस्त्रतां गतेन आकुलीक्रियमाणाः सन्तः विह्वलतां चंचलताम् उपयान्ति।

व्याकरणत्मक टिप्पणी – **प्रलोभ्यमानाः** – प्र+लुभ्+णिच्+यक्+शानच्। **उपचित** –उप+चि+क्त। **बाध्यमानाः** – बाध्+यक्+शानच्। **आयास्यमानाः** – आ+यास्+ णिच्+ यक्+शानच्। **आकुलीक्रियमाणाः** – आकुल+च्वि+कृ+यक्+शानच्।

समास – **श्रमवशशिथिलशकुनिगलपुटचपलाभिः** – श्रमवशेन शिथिलः, तृतीया तत्पुरुष, शकुनीनां गलपुटः, षष्ठी तत्पुरुष, श्रमवशशिथिलः यः शकुनिगलपुटः, तद्वत् चपलाः ताभिः, कर्मधारय। **खद्योतोन्मेषमुहूर्तमनोहराभिः** – खद्योतानाम् उन्मेषः, षष्ठी तत्पुरुष, मुहूर्ताय मनोहराः, चतुर्थी तत्पुरुष, खद्योतोन्मेषवन्मुहूर्तमनोहराभिः, कर्मधारय। **मनस्विजनगर्हिताभिः** – मनस्विनश्च ते जनाः, कर्मधारय, तैः गर्हिताभिः, तृतीया तत्पुरुष। **धनलवलाभावलेपविस्मृतजन्मानः** – धनस्य लवलाभः, षष्ठी तत्पुरुष, तस्य अवलेपः, षष्ठी तत्पुरुष, तेन विस्मृतं जन्म येषां ते, बहुव्रीहि। **दोषासृजेव** – दोषश्च असौ असृक् च, कर्मधारय। **रागावेशेन** – रागस्य आवेशः, षष्ठी तत्पुरुष, तेन। **विविधविषयग्रासलालसैः** – विविधाः विषयाः, कर्मधारय, विविध विषयाणां ग्रासः, षष्ठी तत्पुरुष, तेषां लालसा येषां ते, बहुव्रीहि। **प्राकृतिचंचलतया** – प्रकृत्या चंचलः, तृतीया तत्पुरुष, तस्य भावः। तया। **लब्धप्रसरेण** – लब्धः प्रसरः येन तेन, बहुव्रीहि।

कोश – **खद्योत** – खद्योतोज्योतिरिंगणः, इत्यमरः।

असृग् – रुधिरेसृग्लोहितास्रक्तक्षतजशोणितम्, इत्यमरः।

अलङ्कार निर्देश – **''विविधविषय .... आकुलीक्रियमाणाः''** में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

ग्रहैरिव गृह्यन्ते, भूतैरिवाभिभूयन्ते, मन्त्रैरिवावेश्यन्ते, सत्त्वैरिवावष्टभ्यन्ते, वायुनेव विडम्ब्यन्ते, पिशाचैरिव ग्रस्यन्ते, मदनशरैर्मर्माहता इव मुखभङ्गसहस्त्राणि कुर्वते, धनोष्मणा पच्यमाना इव विचेष्टन्ते, गाढप्रहाराहता इव अङ्गानि न धारयन्ति, कुलीरा इव तिर्यक् परिभ्रमन्ति, अधर्मभग्नगतयः पङ्गव इव परेण संचार्यन्ते। मृषावादविषविपाकसंजातमुखरोगा इवातिकृच्छ्रेण जल्पन्ति, सप्तच्छदतरव इव कुसुमरजोविकारः आसन्नवर्तिनां शिरः शूलमुत्पादयन्ति, आसन्नमृत्यव इव बन्धुजनमपि नाभिजानन्ति, उत्कुपितलोचना इव तेजस्विनो नेक्षन्ते, कालदंष्टा इव महामन्त्रैरपि न प्रतिबुध्यन्ते।

शब्दार्थ – **ग्रहैरिव** = शनि आदि ग्रहों के द्वारा, **गृह्यन्ते** = ग्रसित किये जाते हैं, **भूतैरिवाभिभूयन्ते** = देवयोनि विशेष के द्वारा अभिभूत किये जाते हैं, **मन्त्रैरिवावेश्यन्ते** = मन्त्रों के द्वारा आविष्ट किये जाते हैं, **सत्त्वैरिवावष्टभ्यन्ते** = सिंहादि हिंसक जीवों के द्वारा बलपूर्वक पकड़े जाते हैं, **वायुनेव** = वायु के द्वारा, **विडम्ब्यन्ते** = इधर-उधर विचलित किये जाते हैं, **पिशाचैरिव** = राक्षसों के द्वारा, **ग्रस्यन्ते** = भक्षित किये जाते हैं, **मदनशरैर्मर्महता इव** = कामदेव के बाणों से मर्माहत की तरह, **मुखभङ्गसहस्त्राणि** = हजारों मुख भंगिमायें, **कुर्वते** = बनाते हैं, **धनोष्मणा** = धन के उन्माद के ताप से, **पच्यमाना इव** = पकाये जा रहे की तरह, **विचेष्टन्ते** = चेष्टा करते हैं, **गाढप्रहाराहता इव** = अत्यधिक प्रहार किये गये की तरह, **अङ्गानि** = अंगों को, **न धारयन्ति** = धारण नहीं करते, **कुलीरा इव** = केंकड़ों के समान, **तिर्यक्** = टेढ़े-मेढ़े, **परिभ्रमन्ति** = विचरण करते हैं, **अधर्मभग्नगतयः** = अधर्म के कारण भंग हुई गति वाले, **पङ्गव इव** = लंगड़ों की तरह, **परेण** = दूसरों के द्वारा, **संचार्यन्ते** = चलाये जाते हैं। **मृषावादविषविपाकसंजातमुखरोगा** = असत्य बोलने के फलस्वरूप उत्पन्न हुए मुख रोग वाले की तरह, **अतिकृच्छ्रेण** = बहुत कष्ट से, **जल्पन्ति** = बोल पाते हैं, **सप्तच्छदतरव इव** = सप्तपर्ण के वृक्षों के, **कुसुमरजोविकारैः** = पराग के विकार से, **आसन्नवर्तिनां** = पार्श्ववर्ती लोगों के, **शिरःशूलमुत्पादयन्ति** = शिरों में पीड़ा उत्पन्न करते हैं, **आसन्नमृत्यव इव** = मरणासन्न लोगों के समान, **बन्धुजनमपि** = अपने बन्धुजनों को भी, **नाभिजानन्ति** = नहीं पहचानते, **उत्कुपितलोचना इव** = अतिदुःखी नेत्रों वालों की तरह, **तेजस्विनो** = तेजस्वियों से, **नेक्षन्ते** = आँख नहीं मिला पाते, **कालदंष्टा इव** = काल के द्वारा डसे गये की तरह, **महामन्त्रैरपि** = महान् मन्त्रों से भी, **न प्रतिबुध्यन्ते** = पुनः जीवित नहीं किये जाते।

संस्कृत शब्दार्थ – ग्रहैरिव – शनैश्चरादिभिरिव, गृह्यन्ते – ग्रहणविषयीक्रियन्ते, भूतैरिवाभिभूयन्ते – देवयोनिविशेषैरिव आक्रम्यन्ते, मन्त्रैरिवावेश्यन्ते – देवाद्यधिष्ठातृकशब्दविशेषैः आवेश्यन्ते, आविष्टाः क्रियन्ते, सत्त्वैरिवावष्टभ्यन्ते – रुद्रानुचरैः सिंहादिभिर्वा आक्रम्यन्ते, वायुनेव विडम्ब्यन्ते – पवनेन इव इतस्ततः चाल्यन्ते, पिशाचैरिव ग्रस्यन्ते – राक्षसैः इव भक्षन्ते, मदनशरैर्मर्महता इव – कामदेवबाणैः मर्मसु ताडिताः इव, मुखभङ्गसहस्त्राणि कुर्वते – आननविकाराणां सहस्त्राणि विदधाति, धनोष्मणा – वित्तोन्मादजन्यतापेन, पच्यमाना इव – पाकविषयीक्रियमाणाः इव, विचेष्टन्ते – विविधां चेष्टां कुर्वन्ति, गाढप्रहाराहता इव – तीव्राघात-ताडिता इव, अङ्गानि न धारयन्ति – अवयवान् धर्तुं न पार्यन्ति, कुलीरा इव तिर्यक् परिभ्रमन्ति – कर्कटा इव कुटिलं परिभ्रमणं कुर्वन्ति, अधर्मभग्नगतयः – अधर्मेण पापाचरणेन विनष्टाः गतिः सदाचारानुष्ठानं येषां ते तथा सन्तः, पङ्गव इव परेण – खंजाः इव अन्येन सचिवादिना, संचार्यन्ते – संचाल्यन्ते। मृषावादविषविपाकसंजातमुखारोगा – असत्यभाषणपरिणामसंजातमुखव्याधयः इव, अतिकृच्छ्रेण जल्पन्ति – महता क्लेशेन भाषन्ते, सप्तच्छदतरव इव – सप्तपर्णवृक्षा इव, कुसुमरजोविकारैः – पुष्पमकरन्दैः नेत्ररोगैः वा, आसन्नवर्तिनां – समीपवर्तिनां, शिरः शूलमुत्पादयन्ति – शिरो वेदनां जनयन्ति, आसन्नमृत्यव इव – मरणासन्न इव, बन्धुजनमपि नाभिजानन्ति – स्वजनान् पुत्रादिकानपि न जानन्ति,

उत्कुपितलोचना इव – रुग्णनयना इव, तेजस्विनो नेक्षन्ते – प्रतापवतः न ईक्षन्ते, कालदष्टा इव – कालसर्पदष्टा इव, महामन्त्रैरपि न प्रतिबुध्यन्ते – गरुडादिमहामन्त्रैरपि न उचितं जानन्ति।

अनुवाद – (यह राजा लोग) मानो (शनि आदि) ग्रहों के द्वारा पकड़ लिए जाते हैं। मानो भूतों द्वारा दबा लिए जाते हैं। मानो मन्त्रों द्वारा वश में कर लिए जाते हैं। मानो दुष्ट प्राणियों के द्वारा हठपूर्वक पकड़ लिए जाते हैं। मानो वायु द्वारा इधर-उधर फेंक दिये जाते हैं। मानो पिशाचों द्वारा ग्रस्त कर लिए जाते हैं। कामदेव के बाणों से आहत मर्म वाले लोगों की तरह अनेक प्रकार की मुखभङ्गिमाएं करते हैं। गर्मी से पकाए गए (अन्न आदि) की तरह धन की गर्मी से सन्तप्त यह राजा लोग अनेक प्रकार की विकारयुक्त चेष्टाएं करते हैं। गहरी चोट से आहत लोगों की तरह यह अङ्गों को धारण नहीं करते । केकड़ों की भाँति तिरछे घूमते हैं । अधर्म के कारण भग्न गति वाले यह राजा लोग लंगड़े व्यक्तियों की तरह दूसरे के द्वारा चलाये जाते हैं। झूठे भाषण रूपी विष के विकार से उत्पन्न मुख के रोग से ग्रस्त लोगों की तरह बहुत कठिनाई से बोलते हैं। सप्तच्छद वृक्षों की भाँति यह राजा कुसुमों (नेत्र) के पराग (रजोगुण) विकारों से समीपस्थ लोगों के सिर में पीड़ा उत्पन्न करते हैं। मरणासन्न व्यक्तियों के समान बन्धुजन को भी नहीं पहचानते हैं। उत्कुपित (दुःखे) हुए/उत्कम्पित (प्राबल्य के कारण काँपते हुए) नेत्रों वाले लोगों के समान तेजस्वी व्यक्तियों की ओर निस्स्पृहा से नहीं देखते हैं। पक्ष में सूर्य आदि को नहीं देखते। विषैले सर्प से डसे हुए व्यक्तियों के समान महान् (विष दूर करने वाले) मन्त्रों से भी होश में नहीं लाये जाते हैं।

संस्कृत भावार्थ – लक्ष्म्या गृहीतानां स्थिति प्रदर्शयति ग्रहैः इत्यादिभिः। प्रतिक्षणमनेकविध-भावभङ्गीविधानात् शनीश्वरादिभिः ग्रहैः गृह्यन्ते ध्रियन्ते इव। भूतैः देवयोनिविशेषैः अभिभूयन्ते आक्रम्यन्ते इव। मन्त्रैः वैदिकैः तान्त्रिकैः च आवेश्यन्ते इव वशीक्रियन्ते इव। सत्त्वैः क्रूरप्राणिभिः सिंहादिभिः अवष्टभ्यन्ते हठात् अवलम्ब्यन्ते इव। तत्र कारणं कदाचित् यातनावगमात्। वायुना व्याधिना विडम्ब्यन्ते इव पिशाचैः राक्षसैः ग्रस्यन्ते भक्ष्यन्ते इव।

पुनरपि तेषां राज्ञामवस्थान्तराणि दर्शयति मदनशरैरित्यादिभिः। मदनस्य कामदेवस्य शरैः मर्माहता मर्मसु ताडिता मुखभङ्गसहस्त्राणि कुर्वते कुर्वन्तीव धनोष्मणा धनाभिमानोत्पन्नसन्तापेन पच्यमानाः विचेष्टन्ते इव। गाढप्रहारेण दण्डादेस्तीव्राघातेन आहता इव ताडिता इव अङ्गानि हस्तपादादीनि न । धारयन्ति स्वयं न वहन्ति। कुलीराः कर्कटाख्यप्राणिविशेषा इव तिर्यक् कुटिलं परिभ्रमन्ति। अर्थात् सर्वैः सह कुटिलतामाचरन्ति। अधर्मेण दुष्कृतेन भग्ना विनष्टा गतिः विधेयमार्गे गमनं येषान्ते, पंगुः पक्षे पापेन विनष्टगमनसामर्थ्याः। अत एव पङ्गव इव परेण सचिवादिना पङ्गुपक्षे बन्धुवर्गेण सञ्चार्यन्त। मृषावादाः असत्यभाषणानि एव विषाणि तेषां निपाकेन परिणामेन सञ्जातः मुखरोगः येषान्ते इव अतिकृच्छ्रेणातिप्रयासेन जल्पन्ति किमपि प्रलपन्ति। प्रायेण मौनिनो भवन्ति यदि वदन्ति तदानीं किमपि प्रलपन्ति। सप्तछदतरव सप्तवर्णद्रुमा इव कुसुमानि नेत्ररोगा एव रजोविकाराः रजोगुणपरिणामास्तैः आसान्नवर्तिनः समीपवर्तिनो ये जनास्तेषां शिरश्शूलं शिरोवेदनाम् उत्पादयन्ति। तादृशतश्चोऽपि कुसुमरजसां विकारैर्जनानां शिरोवेदनामुपजनयन्ति। आसन्नः सम्प्राप्तमृत्युः प्राणवियोगः येषान्ते तादृशा इव बन्धुजनमपि किमुतान्यं जनमिति शेषः नाभिजानन्ति न परिचिन्वन्ति। प्राप्तमृत्युपक्षे बुद्धिवैकल्यात् राजपक्षे अहङ्कारात्। उत्कुपिते रुग्णे लोचने येषान्ते तादृशा इव तेजस्विनः प्रतापवतो जनान् नेक्षन्ते ईर्ष्या न पश्यन्ति। राजपक्षे ईर्ष्या अन्यत्र लोचनप्रति घातात। कालेन महाविषभुजगेन दष्टा लोका इव महामन्त्रैरपि षाड्गुण्यविषयकोत्तमविचारणाभिरपि अन्यत्र गारुडादिमहामन्त्रैरपि न प्रतिबुद्धयन्ते ज्ञानं प्राप्नुवन्ति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी - आहताः – आ+हन्+क्त। **पच्यमाना** – पच्+यक्+शानच्। **भग्ना** – भञ्ज+क्त+टाप्। **जल्पन्ति**– जल्प्, लट्,प्र.पु.ब.व.। **उत्पादयन्ति** – उत्+ पद् + णिच्, लट्, प्र.पु.ब.व.।

समास – **मर्माहताः** – मर्मसु आहताः, सप्तमी तत्पुरुष। **मुखभंगसहस्त्राणि** – मुखस्य भंगाः, षष्ठी तत्पुरुष, तेषां सहस्त्राणि, षष्ठी तत्पुरुष। **धनोष्मणा** – धनस्य उष्मणा, षष्ठी तत्पुरुष। **गाढप्रहाराहताः** – गाढश्च यः प्रहारश्च, कर्मधारय, गाढप्रहारेण आहताः, तृतीया तत्पुरुष। **अधर्मभग्नगतयः** – अधर्मेण भग्ना गतिः येषां ते, बहुव्रीहि। **मृषावादविपाकसंजातमुखरोगाः** – मृषावादस्य विपाकः, षष्ठी तत्पुरुष। **कुसुमरजोविकारैः** – कुसुमानां रजांसि, षष्ठी तत्पुरुष, तेषां रजसां विकारैः, षष्ठी तत्पुरुष। **आसन्नमृत्यवः** – आसन्नः मृत्युः येषां ते, बहुव्रीहि। **उत्कम्पितलोचनाः** – उत्कम्पिते लोचने येषां ते, बहुव्रीहि। **कालदष्टाः** – कालेन दष्टाः, तृतीया तत्पुरुष।

अलङ्कार निर्देश – **''ग्रहैरिव .... ग्रस्यन्ते''** में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

जातुषाभरणानीव सोष्माणं न सहन्ते, दुष्टवारणा इव महामानस्तम्भनिश्चलीकृताः न गृह्णन्ति उपदेशम्, तृष्णाविषमूर्च्छिताः कनकमयमिव सर्वं पश्यन्ति, इषव इव पानवर्धिततैक्ष्ण्याः परप्रेरिताः विनाशयन्ति, दूरस्थितान्यपि फलानीव दण्डनिक्षेपैः महाकुलानि शातयन्ति। अकालकुसुमप्रसवा इव मनोहराकृतयोऽपि लोकविनाशहेतवः, श्मशानाग्नय इव अतिरौद्रभूतयः, तैमिरिका इव अदूरदर्शिनः, उपसृष्टा इव क्षुद्राधिष्ठितभवनाः, श्रूयमाणा अपि प्रेतपटहा इवोद्वेजयन्ति, चिन्त्यमाना अपि महापातकाध्यवसाया इव उपद्रवमुपजनयन्ति, अनुदिवसमापूर्यमाणा पापेनेव आध्मातमूर्तयो भवन्ति, तदवस्थाश्च व्यसनशत शरव्यतामुपगताः वल्मीकतृणाग्रावस्थिताः जलबिन्दव इव पतितमप्यात्मानं नावगच्छन्ति।

शब्दार्थ – **जातुषाभरणानीव** = लाक्षा से निर्मित आभूषणों की तरह, **सोष्माणं** = तेजस्वियों को, **न सहन्ते** = सहन नहीं कर पाते, **दुष्टवारणा इव** = दुष्ट हाथियों की तरह, **महामानस्तम्भ** = महान् आलानस्तम्भ में, **निश्चलीकृताः** = बंधे होने के कारण, **उपदेशम्** = उपदेश को, **न गृह्णन्ति** = ग्रहण नहीं करते हैं, **तृष्णाविषमूर्च्छिताः** = तृष्णारूपी विष से मूर्च्छित की तरह, **कनकमयमिव सर्वं पश्यन्ति** = सब कुछ स्वर्णमय ही देखते हैं। **इषव इव** = बाणों की तरह, **पानवर्धिततैक्ष्ण्याः** = निशान में घिसने से बढ़ी हुई तीक्ष्णता वाले, अथवा मद्य आदि के पान से बढ़ी हुई क्रूरता वाले, **परप्रेरिताः** = दूसरे के द्वारा प्रेरित, अथवा धूर्तादि के द्वारा प्रेरित, **विनाशयन्ति** = निशाने को नाश करते हैं, अथवा प्रजाजनों को विनाशोन्मुख बना देते हैं, **दूरस्थितान्यपि** = दूर लगे हुए, **फलानीव** = आम्र आदि के फलों के समान, **दण्डनिक्षेपैः** = दण्ड प्रहार, अथवा दण्डरूप चतुर्थ उपाय के द्वारा, **महाकुलानि शातयन्ति** = विशाल वंश में उत्पन्न, अथवा प्रशस्त वंश में उत्पन्न लोगों को विनष्ट करते हैं, अथवा गिराते हैं। **अकालकुसुमप्रसवा इव मनोहराकृतयोऽपि** = असमय में पुष्पोद्गम से मनोहर आकृति वाले, **लोकविनाशहेतवः** = संसार के विनाश के हेतु बनते हैं, **श्मशानाग्नय इव** = श्मशान की अग्नि के समान, **अतिरौद्रभूतयः** = दूसरों को अत्यधिक भय देने वाली, **तैमरिका इव** = नेत्र रोग विशेष, **अदूरदर्शिनः** = दूर तक न देखने वाले, **उपसृष्टा इव** = रतिसंलग्न वेश्या की तरह, **क्षुद्राधिष्ठितभवनाः** = नीच लोगों के द्वारा आश्रित, **श्रूयमाणा अपि** = सुनी जा रही भी, **प्रेतपटहा** = मृत्युसंस्कार कालिक ढोल आदि वाद्य, **उद्वेजयन्ति** = पीड़ित करते हैं, **चिन्त्यमाना अपि** = सोची गई भी, **महापातकाध्यवसाया इव** = ब्रह्महत्या आदि महान् पापों के उद्योग के समान, **उपद्रवमुपजनयन्ति** = उपद्रव को उत्पन्न करते हैं, **अनुदिवसमापूर्यमाणा पापेनेव** = प्रतिदिन पाप से भरे जा रहे, **आध्मातमूर्तयो** = स्थूलदेह वाले, **भवन्ति** = बन जाते हैं, **तदवस्थाश्च** = ऐसी अवस्था वाले, **व्यसनशतशरव्यतामुपगताः** = कामक्रोधादि के लक्ष्य बनते हैं, **वल्मीकतृणाग्रावस्थिताः** = दीमकों द्वारा मिट्‌टी के ढेर के ऊपर उत्पन्न घास आदि के अग्रभाग में स्थित, **जलबिन्दव इव** = जल की बूँद, **पतितमप्यात्मानं** = अपने गिरने को, **नावगच्छन्ति** = नहीं जान पाते।

संस्कृत शब्दार्थ – जातुषाभरणानीव – लाक्षानिष्पन्नभूषणानीव, सोष्माणं न सहन्ते – तेजस्विनं पुरुषं न सहन्ते, दुष्टवारणा इव – मदोन्मत्तगजा इव, महामानस्तम्भनि – अत्युत्कृष्टो यो मानोहंकारस्तल्लक्षणो यः स्तम्भः स्थूणा, चलीकृता न गृह्णन्ति उपदेशम् – निश्चलीकृताः स्तब्धतां प्रापिताः सन्त उपदेशं शिक्षां न गृह्णन्ति नाददते, तृष्णाविषमूर्च्छिताः – तृष्णैव विषं गरलं तेन मूर्च्छिता भ्रान्ताः, कनकमयमिव सर्वं पश्यन्ति – सुवर्णमयमिव सर्वं विलोकयन्ति। इषव इव – बाणा इव, पानवर्धिततैक्ष्ण्याः – निशान घर्षणेन वृद्धिं गतं तैक्ष्ण्यं यद् वा मद्यादिसेवनं तेन वर्धितं मद्क्रूरत्वं, परप्रेरिताः विनाशयन्ति – चापेन प्रयोजिताः धूर्तादिभिः प्रेरिताः वा, दूरस्थितान्यपि – दूरवर्तीनि अपि, फलानीव, दण्डनिक्षेपैः – यष्टिप्रहारैः दण्डोपयोगेन वा, महाकुलानि शातयन्ति – विशालवंशोत्पन्न लोकान् दूरस्थितानि फलानि वा, पातयन्ति नाशयन्ति वा। अकालकुसुमप्रसवा इव – असमये कुसुमनाम् आगमेन, मनोहराकृतयोऽपि – मनोहराः आकृतयः, लोकविनाशहेतवः – संसारस्य जनस्य वा विनाशकारणानि, श्मशानाग्नय इव, अतिरौद्रभूतयः – परेषाम् अत्यन्तभीतिकारिकाः सम्पत्तयः भस्मानि वा, तैमरिका इव – नेत्ररोगविशेषः, अदूरदर्शिनः, उपसृष्टा इव – रतिसंलग्नाः वेश्या इव, क्षुद्राधिष्ठितभवनाः – नीचलोकैः आश्रितभवनाः, श्रूयमाणा अपि – आकर्ण्यमानाः, प्रेतपटहा – मृतसंस्कारकालिकवाद्यशब्दाः, इवोद्वेजयन्ति – उद्वेगं जनयन्ति, चिन्त्यमाना अपि – मनसिस्मर्यमाणा अपि, महापातकाध्यवसाया इव – ब्रह्महत्यादिनाम उद्योगा इव, उपद्रवमुपजनयन्ति – चित्तस्य उद्वेगं उत्पादयन्ति, अनुदिवसमापूर्यमाणा – प्रतिदिनं भ्रीयमाणाः, पापेनेव आध्मातमूर्तयो भवन्ति – स्थूलदेहाः सम्पद्यन्ते, तदवस्थाश्च, व्यसनशतशरव्यतामुपगताः – कामक्रोधादिनां लक्ष्यतां प्राप्ताः, वल्मीकतृणाग्रावस्थिताः – कीटविशेष निस्सारितमृतपुंजः तस्य अग्रे उत्पन्न तृणस्य अग्रभागे विद्यमान, जलबिन्दव इव, पतितमप्यात्मानं नावगच्छन्ति।

अनुवाद – लाख से बने आभूषणों के समान तेजस्वी पुरुष (ऊष्मा) को सहन नहीं करते हैं । महान् अभिमान के कारण विवेक शून्य यह राजा लोग, अत्यधिक (मान) भारी स्तम्भ से निश्चल किए गए (हस्तिपक = महावत के) उपदेश वाक्य को ग्रहण नहीं करते हैं । तृष्णारूपी विष से बेहोश हुए यह राजा सब वस्तुओं को कनकमय ही देखते हैं । मद्यपान से वर्धित क्रूरता वाले यह राजा लोग शान से बढाई गई धार वाले बाणों की तरह मन्त्री और अन्यों द्वारा प्रेरित होकर (सर्वस्व) विनाश को उत्पन्न करते हैं। दण्ड विक्षेप के द्वारा दूर स्थित फलों की भाँति यह राजा लोग दण्ड (सजा) के माध्यम से (राजनीति आदि से) दूर स्थित महान् कुलों को नष्ट कर देते हैं। असामयिक कुसुम-प्रसव के समान मनोहर आकृति वाले यह राजा लोग लोक-विनाश के कारण होते हैं। अत्यधिक भयानक राख वाली श्मशान की अग्नियों की तरह यह लोग अतीव रौद्र (भयोत्पादक) विभूतियों से युक्त होते हैं। तिमिर-रोग से ग्रस्त व्यक्तियों की भाँति यह दूर तक नहीं देख सकते हैं। गणिकाओं के समान इनके घर क्षुद्र जनों से भरे रहते हैं। सुने जाते हुए भी यह लोग भूतों के पटहों (मृतकवाद्य) के समान उद्वेग उत्पन्न करते हैं। चिन्तन किये जाने पर यह राजा लोग (अर्थात् जब इनका स्मरण करें तो) महापातक (स्त्री हत्या आदि) के प्रयत्नों के समान उपद्रव को उत्पन्न करते हैं (जैसे पापों को स्मरण करके मन काँप उठता है उसी प्रकार इन राजाओं का स्मरण भय उत्पन्न करने वाला होता है)। दिन प्रतिदिन पाप से भरे हुए यह लोग अत्यन्त स्थूल शरीर वाले हो जाते हैं। इस प्रकार की अवस्था वाले ऐसे द्यूत आदि व्यसनों को प्राप्त हुए यह राजा लोग वल्मीक के ऊपर स्थित तृण के अग्रभाग पर पड़ी हुई जल की बूँदों के समान पतित हुए स्वयं को नहीं पहचान पाते हैं।

संस्कृत भावार्थ – लाक्षया निर्मितानि आभरणानि इव सोष्माणं न सहन्ते। राजपक्षे प्रतापवन्तं पुरुषम् अन्यत्रग्निम्। दुष्टाः वारणा गजा इव महामानस्तम्भनिश्चलीकृताः न गृह्णन्ति उपदेशं, राजपक्षे महामानेनाभिमानेन यः स्तम्भः तेन निश्चलीकृताः, गजपक्षे महामानः यः स्तम्भः गजबन्धनस्थूणः। तृष्णैव विषं तेन मूर्च्छिताः सर्व वस्तु कनकमयम् इव पश्यन्ति। इषवः बाणाः

इव पानवर्धिततक्ष्ण्याः परप्रेरिताः विनाशयन्ति। राजपक्षे पानेन मद्यपानेन वर्धितं तैक्ष्ण्यमुग्रता येषान्ते परेणोत्साहं प्रापिताः प्रजादीन् विनाशयन्ति पक्षे पानेन कर्कशीपाषणाघर्षणेन वर्धित तैक्ष्ण्याः परेण धानुष्केण प्रेरितास्सन्तः लक्ष्याणि नाशयन्ति। दूरे स्थितानि विद्यमानान्यपि दण्डविक्षेपैः फलानीव महाकुलानि शातयन्ति। राजपक्षे दण्डविक्षेपो नाम सामादित्रितयप्रयोगः। अकाले असमये कुसुमानां प्रसवा इव मनोहराकृतयोऽपि लोकविनाशस्य हेतवो भवन्ति। श्मशानाग्नय इव अतिरौद्रभूतयः। राजपक्षे भूतिर्नाम ऐश्वर्य श्मशानाग्निपक्षे भस्म। तैमिरिका तिमिराख्यनेत्ररोगिण इव अदूरदर्शिनः। उपसृष्टा रतिसंलग्नाः वेश्या हव क्षुद्राधिष्ठितभवनाः। राजपक्षे क्षुद्रैः नीचजनैः, उपसृष्टापक्षे विटैरधिष्ठितं भवनम्। श्रूयमाणा अपि किमुतावलोकनादानिति अपि शब्दार्थः प्रेतपटहा इव उद्वेजयन्ति। मृतशरीराणां पुरस्तात् पटहा ताड्यन्ते। चिन्त्यमाना अपि संयोगादौ का कथेति अपि शब्दार्थः महापातकानां ब्रह्महत्यादीनाम् अध्यवसाया इव उपद्रवम् उपजनयन्ति। अनुदिवसं प्रतिदिनम् आपूर्यमाणाः पापेनाध्मातमूर्तयो भवन्ति। तदनस्थाश्च व्यसनानां शतस्य लक्ष्यतामुपगतास्सन्तः वल्मीकतृणस्याग्रे विद्यमानाः जलबिन्दव इव पतितमात्मानं नावगच्छन्ति।

व्याकरणत्मक टिप्पणी – **आसन्नः** – आ+सद्+क्त। **ईक्षन्ते** – ईक्ष्, आत्मनेपद,प्र.पु.ब. व.। **निश्चलीकृताः** – निश्चल+च्वि+कृ+क्त। **कनकमयम्** – कनक+मयट्। **तैक्षण्यम्** – तीक्ष्ण+ ष्यञ्।

समास – **जातुषाभरणानि** – जातुषानि च तानि आभरणानि, कर्मधारय। **सोष्माणम्** – ऊष्मणा सहितम्, तृतीया तत्पुरुष। **महामानस्तम्भनिश्चलीकृताः** – महांश्चासौ मानश्च, कर्मधारय, तेन स्तम्भवत् निश्चलीकृताः, तृतीया तत्पुरुष। **तृष्णाविषमूर्च्छिताः** – तृष्णा एव विषः, कर्मधारय, तेन मूर्च्छिताः, तृतीया तत्पुरुष। **पानवर्द्धिततैक्ष्ण्याः** – पानेन वर्द्धितं तैक्ष्ण्यं येषां ते, बहुव्रीहि। **परप्रेरिताः** – परैः प्रेरिताः, तृतीया तत्पुरुष। **दण्डविक्षेपैः** – दण्डानां विक्षेपैः, तृतीया तत्पुरुष। **महाकुलानि** – महान्ति कुलानि, कर्मधारय। **अकालकुसुमप्रसवाः** – कुसुमानां प्रसवाः, षष्ठी तत्पुरुष, अकाले कुसुमप्रसवाः, सप्तमी तत्पुरुष। **लोकविनाशहेतवः** – लोकस्य विनाशः, षष्ठी तत्पुरुष, लोकविनाशस्य हेतवः, षष्ठी तत्पुरुष।

अलङ्कार निर्देश – **''दुष्टवारणा इव .... न गृह्णन्ति उपदेशम्''** में साम्य प्रतिपादन के कारण उपमा अलंकार है। **''तृष्णाविषमूर्च्छिता ..... सर्वं पश्यन्ति''** में रूपक और उत्प्रेक्षा का संकर अलंकार है।

बोध प्रश्न

1) कैसे राजा सभी वस्तुओं को कनकमय देखते हैं?

....

....

....

....

2) 'आसन्नमृत्यु' से क्या तात्पर्य है ?

....

....

....

....

....

3) 'आहताः' में किस प्रत्यय का प्रयोग किया गया है?

....

....

....

....

....

4) 'मदनशरैः' का समास विग्रह कीजिए।

....

....

....

....

....

5) 'ग्रहैरिव गृह्यन्ते' में किस अलंकार का प्रयोग किया गया है?

....

....

....

....

6) 'गाढप्रहाराहता इव अंगानि' का अभिप्राय लिखिए ।

....

....

....

....

....

अभ्यास प्रश्न

1) बाणभट्ट ने धनलोलुप राजा का क्या स्वरूप बताया है ?
2) राजाओं के लिये काम-क्रोधादि किस प्रकार के शत्रु हैं ?
3) 'मृषावादविपाकसंजातमुखरोगाः' का भावार्थ स्पष्ट कीजिए।
4) इस इकाई का सार अपने शब्दों में लिखिए ।

8.3 सारांश

इस इकाई में आपने बाणभट्ट द्वारा वर्णित राजाओं की अवस्था का अध्ययन किया। इसके अध्ययन से आपने जाना कि –

श्रम के कारण पक्षियों की शिथिल (ढीली) हुई गर्दन के समान चंचल, जुगुनू की चमक के समान क्षण भर के लिए मन को हरने वाली, मनस्वी लोगों के द्वारा निन्दित सम्पत्तियों के द्वारा प्राप्त किए गए, थोड़े से धन पा जाने के गर्व से जन्म-मरण की परम्परा को भूलकर अपने को अमर मानने वाले, अनेक दोषों के बढने से दूषित रक्त के समान, राग के आवेश से बाध्य किये गये, अनेक प्रकार के विषय रूपी ग्रासों के लोभी, पाँच होते हुए भी अनेक सहस्त्रों की संख्या में प्रतीत होने वाली इन्द्रियों के द्वारा दुःखी किए गए, स्वभाव से चंचल होने के कारण प्रसार को प्राप्त हुए, एक होते हुए भी मानो सहस्त्र की संख्या को प्राप्त हुए मन के द्वारा आकुलित किये गए कुछ राजा लोग व्याकुलता को प्राप्त करते हैं।

(यह राजा लोग) मानो (शनि आदि) ग्रहों के द्वारा पकड़ लिए जाते हैं। मानो भूतों द्वारा दबा लिए जाते हैं। मानो मन्त्रों द्वारा वश में कर लिए जाते हैं। मानो दुष्ट प्राणियों के द्वारा हठपूर्वक पकड़ लिए जाते हैं। मानो वायु द्वारा इधर-उधर फेंक दिये जाते हैं। मानो पिशाचों द्वारा ग्रस्त कर लिए जाते हैं। कामदेव के बाणों से आहत मर्म वाले लोगों की तरह अनेक प्रकार की मुखभङ्गिमाएं करते हैं। गर्मी से पकाए गए (अन्न आदि) की तरह धन की गर्मी से सन्तप्त यह राजा लोग अनेक प्रकार की विकारयुक्त चेष्टाएं करते हैं। गहरी चोट से आहत लोगों की तरह यह अङ्गों को धारण नहीं करते । केकड़ों की भाँति तिरछे घूमते हैं। अधर्म के कारण भग्न गति वाले यह राजा लोग लंगड़े व्यक्तियों की तरह दूसरे के द्वारा चलाये जाते हैं। झूठे भाषण रूपी विष के विकार से उत्पन्न मुख के रोग से ग्रस्त लोगों की तरह बहुत कठिनाई से बोलते हैं। सप्तच्छद वृक्षों की भाँति यह राजा कुसुमों (नेत्र) के पराग (रजोगुण) विकारों से समीपस्थ लोगों के सिर में पीड़ा उत्पन्न करते हैं। मरणासन्न व्यक्तियों के समान बन्धुजन को भी नहीं पहचानते हैं। उत्कुपित (दुःखे) हुए/ उत्कम्पित (प्राबल्य के कारण काँपते हुए) नेत्रों वाले लोगों के समान तेजस्वी व्यक्तियों की ओर निस्स्पृहा से नहीं देखते हैं। पक्ष में सूर्य आदि को नहीं देखते। विषैले सर्प से डसे हुए व्यक्तियों के समान महान् (विष दूर करनेवाले) मन्त्रों से भी होश में नहीं लाये जाते हैं।

लाख से बने आभूषणों के समान तेजस्वी पुरुष (ऊष्मा) को सहन नहीं करते हैं। महान् अभिमान के कारण विवेक शून्य यह राजा लोग, अत्यधिक (मान) भारी स्तम्भ से निश्चल किए गए (हस्तिपक = महावत के) उपदेश वाक्य को ग्रहण नहीं करते हैं। तृष्णारूपी विष से बेहोश हुए यह राजा सब वस्तुओं को कनकमय ही देखते हैं। मद्यपान से वर्धित क्रूरता वाले यह राजा लोग शान से बढाई गई धार वाले बाणों की तरह मन्त्री और अन्यों द्वारा प्रेरित होकर (सर्वस्व) विनाश को उत्पन्न करते हैं। दण्ड विक्षेप के द्वारा दूर स्थित फलों की भाँति यह राजा लोग दण्ड (सजा) के माध्यम से (राजनीति आदि से) दूर स्थित महान् कुलों को नष्ट कर देते हैं। असामयिक कुसुम-प्रसव के समान मनोहर आकृति वाले यह राजा लोग लोक-विनाश के कारण होते हैं। अत्यधिक भयानक राख वाली श्मशान की अग्नियों की तरह यह लोग अतीव रौद्र (भयोत्पादक) विभूतियों से युक्त होते हैं। तिमिर–रोग से ग्रस्त व्यक्तियों की भाँति यह दूर तक नहीं देख सकते हैं। गणिकाओं के समान इनके घर क्षुद्र जनों से भरे रहते हैं। सुने जाते हुए भी यह लोग भूतों के पटहों (मृतकवाद्य) के समान उद्वेग उत्पन्न करते हैं। चिन्तन किये जाने पर यह राजा लोग (अर्थात् जब इनका स्मरण करें तो) महापातक (स्त्री हत्या आदि) के प्रयत्नों के समान उपद्रव को उत्पन्न करते हैं (जैसे पापों को स्मरण करके मन काँप उठता है उसी प्रकार इन राजाओं का स्मरण भय उत्पन्न करने वाला होता है)। दिन प्रतिदिन पाप से भरे हुए यह लोग अत्यन्त स्थूल शरीर वाले हो जाते हैं। इस प्रकार की अवस्था वाले ऐसे द्यूत आदि व्यसनों को प्राप्त हुए यह राजा लोग वल्मीक के ऊपर स्थित तृण के अग्रभाग पर पड़ी हुई जल की बूँदों के समान पतित हुए स्वयं को नहीं पहचान पाते हैं।

8.4 शब्दावली

मनस्विजनगर्हिताभिः	–	स्वाभिमानी मनुष्यों द्वारा निन्दित
सम्पद्भिः	–	सम्पत्तियों के द्वारा
प्रलोभ्यमानाः	–	ललचाये जाते हुये
इवेन्द्रियैः	–	ऐसी इन्द्रियों के द्वारा
आयास्यमानाः	–	पीड़ित किये जाते हुये
लब्धप्रसरेण	–	प्रसार प्राप्त करने वाली
ग्रहैरिव	–	शनि आदि ग्रहों के द्वारा
मन्त्रैरिवावेश्यन्ते	–	मन्त्रों के द्वारा आविष्ट किये जाते हैं
वायुनेव	–	वायु के द्वारा
पिशाचैरिव	–	राक्षसों के द्वारा
ग्रस्यन्ते	–	भक्षित किये जाते हैं
मुखभङ्गसहस्त्राणि	–	हजारों मुख भंगिमायें
धनोष्मणा	–	धन के उन्माद के ताप से
सोष्माणं	–	तेजस्वियों को
आध्मातमूर्तयो	–	स्थूलदेह वाले

8.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) कादम्बरी – भावबोधिनी व्याख्या सहित, डॉ. जयशंकर लाल त्रिपाठी, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 1993।

2) कादम्बरी – महोपाध्याय भानुचन्द्रसिद्धचन्द्र कृत टीका सहित, सं. काशीनाथ पाण्डुरङ्ग परब्, निर्णयसागर प्रेस्, बॉम्बे, 1849 (शकाब्द)।

8.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. तृष्णारूपी विष से बेहोश हुए राजा सभी वस्तुओं को कनकमय देखते हैं।
2. 'आसन्नमृत्यु' से तात्पर्य है –मरणासन्न।
3. 'आहताः' में क्त प्रत्यय का प्रयोग किया गया है।
4. 'मदनशरैः' का समास विग्रह है – मर्मसु आहताः,षष्ठी तत्पुरुष।
5. 'ग्रहैरिव गृह्यन्ते' में उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग किया गया है।
6. 'गाढप्रहाराहता इव अंगानि' का अभिप्राय है –अत्यधिक प्रहार किये गये अंगों को ।

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

इकाई 9 शुकनासोपदेश (राजाओं की विभिन्न अवस्थाओं का निरूपण)-भाग 2

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 गद्यांश का अनुवाद – अपरे तु .... स्वभवनमाजगाम।

9.3 सारांश

9.4 शब्दावली

9.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

- बाणभट्ट की शैली से परिचित होंगे।
- राजा को किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए, यह जान सकेंगे।
- चन्द्रापीड के गुणों से परिचित होंगे।
- राजाओं की विभिन्न अवस्थाओं का परिचय प्राप्त करेंगे।
- आप संस्कृत की पारिभाषिक शब्दावली तथा विशिष्ट प्रयोग विधि का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रों! पूर्व इकाई में आपने बाणभट्ट द्वारा वर्णित राजाओं की अवस्था का अध्ययन किया। इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि –

श्रम के कारण पक्षियों की शिथिल (ढीली) हुई गर्दन के समान चंचल, जुगुनू की चमक के समान क्षण भर के लिए मन को हरने वाली, मनस्वी लोगों के द्वारा निन्दित सम्पत्तियों के द्वारा प्राप्त किए गए, थोड़े से धन पा जाने के गर्व से जन्म-मरण की परम्परा को भूलकर अपने को अमर मानने वाले, अनेक दोषों के बढने से दूषित रक्त के समान, राग के आवेश से बाध्य किये गये, अनेक प्रकार के विषय रूपी ग्रासों के लोभी, पाँच होते हुए भी अनेक सहस्त्रों की संख्या में प्रतीत होने वाली इन्द्रियों के द्वारा दुःखी किए गए, स्वभाव से चंचल होने के कारण प्रसार को प्राप्त हुए, एक होते हुए भी मानो सहस्त्र की संख्या को प्राप्त हुए मन के द्वारा आकुलित किये गए कुछ राजा लोग व्याकुलता को प्राप्त करते हैं।

यह राजा लोग मानो शनि आदि ग्रहों के द्वारा पकड़ लिए जाते हैं। मानो भूतों द्वारा दबा लिए जाते हैं। मानो मन्त्रों द्वारा वश में कर लिए जाते हैं। मानो दुष्ट प्राणियों के द्वारा हठपूर्वक पकड़ लिए जाते हैं। मानो वायु द्वारा इधर-उधर फेंक दिये जाते हैं। मानो पिशाचों द्वारा ग्रस्त कर लिए जाते हैं। कामदेव के बाणों से आहत मर्म वाले लोगों की तरह अनेक प्रकार की मुखभङ्गिमाएं करते हैं। गर्मी से पकाए गए (अन्न आदि) की तरह धन की गर्मी

से सन्तप्त यह राजा लोग अनेक प्रकार की विकारयुक्त चेष्टाएं करते हैं। गहरी चोट से आहत लोगों की तरह यह अङ्गों को धारण नहीं करते। केकड़ों की भाँति तिरछे घूमते हैं। अधर्म के कारण भग्न गति वाले यह राजा लोग लंगड़े व्यक्तियों की तरह दूसरे के द्वारा चलाये जाते हैं। झूठे भाषण रूपी विष के विकार से उत्पन्न मुख के रोग से ग्रस्त लोगों की तरह बहुत कठिनाई से बोलते हैं। सप्तच्छद वृक्षों की भाँति यह राजा कुसुमों (नेत्र) के पराग (रजोगुण) विकारों से समीपस्थ लोगों के सिर में पीड़ा उत्पन्न करते हैं। मरणासन्न व्यक्तियों के समान बन्धुजन को भी नहीं पहचानते हैं। उत्कुपित नेत्रों वाले लोगों के समान तेजस्वी व्यक्तियों की ओर निस्स्पृहा से नहीं देखते हैं। पक्ष में सूर्य आदि को नहीं देखते। विषैले सर्प से डंसे हुए व्यक्तियों के समान महान् (विष दूर करने वाले) मन्त्रों से भी होश में नहीं लाये जाते हैं।

लाख से बने आभूषणों के समान तेजस्वी पुरुष (ऊष्मा) को सहन नहीं करते हैं। महान् अभिमान के कारण विवेक शून्य यह राजा लोग, अत्यधिक (मान) भारी स्तम्भ से निश्चल किए गए हाथी (हस्तिपक = महावत के) उपदेश वाक्य को ग्रहण नहीं करते हैं। तृष्णारूपी विष से बेहोश हुए यह राजा सब वस्तुओं को कनकमय ही देखते हैं। मद्यपान से वर्धित क्रूरता वाले यह राजा लोग शान से बढाई गई धार वाले बाणों की तरह मन्त्री और अन्यों द्वारा प्रेरित होकर (सर्वस्व) विनाश को उत्पन्न करते हैं। दण्ड निक्षेप के द्वारा दूर स्थित फलों की भाँति यह राजा लोग दण्ड (सजा) के माध्यम से (राजनीति आदि से) दूर स्थित महान् कुलों को नष्ट कर देते हैं। असामयिक कुसुम-प्रसव के समान मनोहर आकृति वाले यह राजा लोग लोक-विनाश का कारण बनते हैं। अत्यधिक भयानक राख वाली श्मशान की अग्नियों की तरह यह लोग अतीव रौद्र (भयोत्पादक) विभूतियों से युक्त होते हैं। तिमिर-रोग से ग्रस्त व्यक्तियों की भाँति यह दूर तक नहीं देख सकते हैं। गणिकाओं के समान इनके घर क्षुद्र जनों से भरे रहते हैं। सुने जाते हुए भी यह लोग भूतों के पटहों (मृतकवाद्य) के समान उद्वेग उत्पन्न करते हैं। चिन्तन किये जाने पर यह राजा लोग (अर्थात् जब इनका स्मरण करें तो) महापातक (स्त्री हत्या आदि) के प्रयत्नों के समान उपद्रव को उत्पन्न करते हैं (जैसे पापों को स्मरण करके मन काँप उठता है उसी प्रकार इन राजाओं का स्मरण भय उत्पन्न करने वाला होता है)। दिन प्रतिदिन पाप से भरे हुए यह लोग अत्यन्त स्थूल शरीर वाले हो जाते हैं। इस प्रकार की अवस्था वाले तथा द्यूत आदि व्यसनों को प्राप्त हुए यह राजा लोग वल्मीक के ऊपर स्थित तृण के अग्रभाग पर पड़ी हुई जल की बूँदों के समान पतित हुए स्वयं को नहीं पहचान पाते हैं।

प्रस्तुत इकाई में आप पढ़ेंगे कि उपदेश देते हुए शुकनास ने चन्द्रापीड को राजधर्म की सूक्ष्म से सूक्ष्म शिक्षा देते हुए राजा के दुर्गुणों का भी उल्लेख किया है। शुकनास बताता है कि यह राजतन्त्र अत्यधिक कठिन है। इसमें राजा धूर्तों से घिर जाता है और सत्य-असत्य का विवेक कर पाने में असमर्थ हो जाता है। चाटुकार लोग सारे काम छोड़ कर राजा की चाटुकारिता में लग जाते हैं और राजा को इतना प्रभावित कर लेते हैं कि वह उन्हीं की बातें सुनता है। इसलिये तुम्हें इन सबसे सावधान रहना है। तुम संस्कारवान् पिता के पुत्र हो। पिता ने तुम्हें अच्छी शिक्षा दिलायी है फिर भी मैंने तुम्हें यह सब बता कर सावधान किया है। तुम्हें इस पर अमल करना चाहिये।

9.2 गद्यांश का अनुवाद – अपरे तु .... स्वभवनमाजगाम।

अपरे तु स्वार्थनिष्पादनपरैः धनपिशितग्रासगृध्रैः आस्थाननलिनीबकैः द्यूतं विनोद इति, परदारागमनं वैदग्ध्यमिति, मृगया श्रम इति, पानं विलासः इति, प्रमत्तता शौर्यमिति, स्वदारपरित्यागः अव्यसनितेति, गुरुवचनावधीरणम् अपरप्रणेयत्वमिति,

अजितभृत्यता सुखोपसेव्यत्वमिति, नृत्य-गीत-वाद्य-वेश्याभिसक्तिः रसिकतेति, महापराधानाकर्णनं महानुभावतेति, परिभवसहत्वं क्षमेति, स्वच्छन्दतां प्रभुत्वमिति, देवावमाननं महासत्त्वतेति, बन्दिजनख्यातिः यशः इति, तरलतामुत्साह इति, अविशेषज्ञता अपक्षपातित्वम् इति दोषानपि गुणपक्षमध्यारोपयद्भिरन्तः स्वयमपि विहसद्भिः प्रतारणकुशलैः धूर्तैः अमानुषोचिताभिः स्तुतिभिः प्रतार्यमाणाः वित्तमदमत्तचित्ता निश्चेतनतया तथैव इत्यन्यारोपितालीकाभिमाना मर्त्यधर्माणोऽपि दिव्यांशावतीर्णमिव सदैवतमिवातिमानुषम् आत्मानम् उत्प्रेक्षमाणाः प्रारब्धदिव्योचितचेष्टानुभावाः सर्वजनस्य उपहास्यताम् उपयान्ति। आत्मविडम्बनां च अनुजीविना जनेन क्रियमाणम् अभिनन्दन्ति। मनसा देवताध्यारोपणप्रतारणा सम्भूतसंभावनोपहताश्च अन्तः प्रविष्टापरभुजद्वयमिव आत्मबाहुयुगलं सम्भावयन्ति। त्वगन्तरिततृतीयलोचनं स्वललाटमाशंकन्ते। दर्शनप्रदानमपि अनुग्रहं गणयन्ति। दृष्टिपातमपि उपकारपक्षे स्थापयन्ति। सम्भाषणमपि संविभागमध्ये कुर्वन्ति। आज्ञामपि वरप्रदानं मन्यन्ते। स्पर्शमपि पावनमाकलयन्ति।

शब्दार्थ – **अपरे** = अन्य राजा गण, **स्वार्थनिष्पादनपरैः** = स्वार्थ की सिद्धि में तत्पर, **धन-पिशित-ग्रासगृध्रैः** = धनरूपी माँस को खाने वाले गिद्ध, **आस्थाननलिनीबकैः** = सभामण्डप रूप कमलिनी के बक, **परदाराभिगमनम्** = परायी स्त्री का उपभोग, **मृगया** = आखेट, **प्रमत्तता** = मतवालापन, **स्वदारपरित्यागः** = अपनी पत्नी का परित्याग, **अव्यसनिता** = अनासक्ति,आसक्तिराहित्य, **अवधीरणम्** = तिरस्कार, **अपरप्रणेयत्वम्** = स्वतन्त्रता, अपराधीनता, **अजितभृत्यता** = भृत्यों पर अधिकार न होना, **पराभवसहत्वम्** = पराजय की सहनशीलता, **महासत्त्वता** = अतिशय शक्तिशालिता, **तरलता** = चंचलता, **प्रतारणकुशलैः** = वंचना में निपुण, **अलीकाभिमानाः** = मिथ्या अभिमान वाले, **दिव्यांशावतीर्णम्** = देवताओं के अंश से अवतीर्ण, **सदैवतम्** = देवभाव से युक्त, **अतिमानुषम्** = मनुष्यता को अतिक्रान्त करने वाला, **प्रारब्धदिव्योचितचेष्टानुभावाः** = देवताओं जैसी चेष्टा करने वाले, **त्वगन्तरिततृतीयलोचनम्** = ललाट चर्म में छिपी तीसरी नेत्र वाला।

संस्कृत शब्दार्थ – धनपिशितग्रासगृध्रैः = धनम् एव पिशितं तस्य ग्रासाः खण्डाः तेषां भक्षणाय गृध्राः इव तैः। आस्थानं सभामण्डपं राज्ञाम् उपवेशनस्थलं तदेव नलिनी कमलिनी तस्यां छद्मरूपेण स्थिताः धूर्ताः एव बकाः तः। स्वदारपरित्यागः = स्वस्य आत्मनः दाराः पत्नी तासां परित्यागः त्यागः विवाहविच्छेदः। अविशेषज्ञताम् = न विशेषं जानाति यः सः अविशेषज्ञः तस्य भावः तत्ता इति ताम्। आरोपितालीकाभिमानाः = आरोपितः ऊढः अङ्गीकृतः अलीकं मिथ्या अभिमानः गर्वः येन ते। प्रारब्धदिव्योचितचेष्टानुभावः = प्रारब्धाः आरब्धाः दिव्योचितः देवजनयोग्याः चेष्टाः क्रियाः ताभिः अनुभावः माहात्म्यं महिमा येषां ते। देवताध्यारोपणविप्रतारणाद् देवता देवभावः तस्य अध्यारोपणम् आरोपणम् आग्रहः तेन विप्रतारणम् छलनं तस्माद्। असद्भूत सम्भावनोपहताः = असद्भूतः अविद्यमानो भावः तस्य सम्भावना उत्प्रेक्षा तया उपहताः विनष्टाः। अन्तः प्रविष्टापरभुजद्वयम् = अन्तः मध्ये प्रविष्टः संजातः अपरम् अन्यत् भुजद्वयं बाहुयुगलं यस्य तद्वत्। त्वगन्तरिततृतीयलोचनम् = त्वक् त्वचा तस्याम् अन्तरितं पिहितं निधापितं न दृष्टिगोचरं तृतीयं लोचनं नेत्रं यस्य तम्। संविभागमध्ये = संविभागः पारितोषिकः पुरस्कारः तस्य मध्ये अर्थात् पुरस्कारदानतुल्यं गणयन्ति।

अनुवाद – इनसे भिन्न अन्य (राजा) तो स्वार्थ साधन में तत्पर, धनरूपी कच्चे माँस के ग्रास के लोभी, राजभवन रूपी कमलवन में धूर्त बक के समान, दोषों को गुणपक्ष पर आरोपित करने वाले भीतर ही स्वयं भी हंसने वाले, धोखा देने में कुशल धूर्तों के द्वारा इस प्रकार समझाये जाते हैं कि जुआँ विनोद है, परस्त्री के साथ सम्भोग चातुर्य है, शिकार खेलना व्यायाम है, मद्यपान करना विलास है, प्रमाद करना शौर्य है, अपनी पत्नी का त्याग करना व्यसनहीनता है, गुरुजनों के वचनों का तिरस्कार करना स्वातन्त्र्य है, सेवकों को न जीतना

(अर्थात् उन्हें अपने वश में न रखना) सुखपूर्वक सेवा है, नृत्य, गीत, वाद्य तथा वेश्याओं में आसक्ति होना रसिकता हैं, महान् अपराध पर कान न देना महानुभावता है, तिरस्कार को सह लेना क्षमा है, स्वच्छन्दता प्रभुत्व है, देवताओं का अपमान महाशक्तिशालिता है, बन्दीजनों (चारणों) के द्वारा गायी गयी प्रशंसा यश है, चंचलता ही उत्साह है, विशेषज्ञ न होना ही पक्षपात हीनता है। इस प्रकार देवोचित स्तुतियों के द्वारा ठगे जाते हुए, धन रूपी मद से उन्मत्त चित्त वाले, निश्चेतनता के कारण ऐसा ही है, इस प्रकार स्वयं पर मिथ्या अभिमान का आरोपण करने वाले, मरणशील होने पर भी स्वयं को दिव्य अंश का अवतार तथा मानुषत्व से ऊपर (स्वयं को देवता) मानते हए, अलौकिक चेष्टाओं तथा माहात्म्य को प्रारम्भ करने वाले राजा सब लोगों की हंसी का पात्र बनते हैं। सेवकजन द्वारा की गई स्वयं की विडम्बना का अभिनन्दन करते हैं। मन में देवता के अध्यारोपण की प्रतारणा से उत्पन्न सम्भावना के कारण उपहत (यह राजा लोग) अपने बाहुयुगल को मानो अन्दर प्रविष्ट दो अन्य भुजाओं से युक्त (चतुर्भुज रूप) मानते हैं। अपने ललाट को अपनी त्वचा के भीतर संकुचित हुए तृतीय नेत्र से युक्त मानते हैं। दर्शन देने को अनुग्रह समझते हैं। किसी पर दृष्टि डालने को उपकार मानते हैं। वार्तालाप करने को पुरस्कार मानते हैं। आज्ञा देने को वरदान समझते हैं। किसी को स्पर्श करने को उसे पवित्र कर देना मानते हैं।

संस्कृत भावार्थ – राज्ञामन्यवर्गः दोषानपि गुणपक्षमध्यारोपयद्भिः प्रतारणकुशलैः धूर्तैः प्रतारितो भवति तदेव वर्णयति। अपरे तु अन्ये खलु राजानः स्वार्थनिष्पादनपरैः स्वाभीष्ट-कर्मानुष्ठानपरायणः धनपिशितग्रासगृध्रैः सम्पद् एव मांसं तस्य उपभोगे गृध्रपक्षी इव, दूरदर्शी इव आस्थान नलिनीबकैः, नृपपक्षे-सभामण्डपे निगूढः जनः, आस्थाननलिनीपक्षे नलिन्याम् अन्तर्हितैः बकैः (मत्स्याः घातिताः सन्ति एवमेव धूर्तैः राजानः वञ्चिताः सन्ति)। धूर्तैः प्रतारकैः प्रतारिताः राजानः तैः धूर्तैः एवम् उपदिष्टाः सन्ति-द्यूतं विनोद इति अक्षः दीव्यनं क्रीडामात्रम् इति। परदाराभिगमनं वैदग्ध्यमिति परस्त्रीसम्भोगं रसिकता इति। मृगया श्रम इति मृगवधार्थम् आखेट व्यायामः इति। पानं विलास इति मद्यपानं विलसनम् इति। प्रमत्तता शौर्यमिति अनवधानता शूरता इति। स्वदारापरित्यागोऽव्यसनितेति निजपत्न्याः त्यागम् अनासक्तिता इति। गुरुवचनावधीरणमपरप्रणेयत्वमिति गुरोः शिक्षावचनानां तिरस्कारः अन्यनेतृत्वम् इति। अजितभृत्यता सुखोपसेव्यत्वमिति स्वतन्त्रसेवकत्वम् अनायासेन उपभोग्यत्वम्। नृत्यगीतवाद्यवेश्याभिसक्तिः रसिकतेति नर्तनगानवादनवारवधूषु आसक्तिः रसाभिज्ञता इति।

व्याकरणात्मक टिप्पणी – **निष्पादनम्**–निस्+पद्+णिच्+ल्युट्। **आस्थानम्**–आ+स्था+ल्युट्। **मृगयाम्**–मृग+णिच्+श+टाप्। **प्रमत्ता**–प्र+मद्+क्त+तल्+टाप्। **शौर्यम्**–शूर+ष्यञ्। **उपसेव्यः**–उप+सेव्+ण्यत्। **अनुभावः**–अनु+भू+घञ्। **प्रतारण**–प्र+तृ+णिच्+ल्युट्। **प्रारब्धा**–प्र+आ+रभ्+क्त+टाप्। **विप्रतारणा**–वि+प्र+तृ+णिच्+युच्+टाप्। **उपहताः**–उप+हन्+क्त।

समास – **स्वार्थनिष्पादनपरः**–स्वस्य अर्थः इति ष० तत्पु०। स्वार्थस्य निष्पादनम् इति ष० तत्पु०। तस्मिन् परः इति स० तत्पु०। **धनपिशितग्रासगृध्रैः**–धनानि एव पिशितानि इति कर्म०। धनपिशितानां ग्रासाः इति ष० तत्पु०। तेषु गृध्रः इति स० तत्पु०। **आस्थाननलिनीधूर्तबकैः** – आस्थानम् एव नलिनी इति कर्म०। तस्यां धूर्तैः बकैः इति स० तत्पु०। **परदाराभिगमनम्** – परस्य दाराः इति ष० तत्पु०। तैः सह अभिगमनम् इति तृ० तत्पु०। **गुरुवचनावधीरणम्**– गुरोः वचनम् इति ष० तत्पु० । तेषाम् अवधीरणम् इति ष० तत्पु०। **अपरप्रणेयत्वम्** – परैः प्रणेयत्वम् इति त० तत्पु०। न परप्रणेयत्वम् इति नञ् तत्पु०। **अजितभृत्यता** – जितः भृत्यो येन सः इति बहु०। तस्य भावः इति जितभृत्यता। न जितभृत्यता इति नञ् तत्पु० । **सुखोपसेव्यत्वम्**–सुखेन उपसेव्यः तृ० तत्पु० । तस्य भावः । **नृत्यगीतवाद्यवेश्याभिसक्तिः**–नृत्यं च गीतं च वाद्यं च वेश्या च इति द्वन्द्व स० । तासु अभिसक्तिः इति स० तत्पु०। **महापराधावकर्णनम्** –महांश्चासौ अपराधश्च इति कर्म। तेषां अवकर्णनम् इति ष०

तत्पु०। **देवावमाननम्**—देवानाम् अवमाननम् इति ष० तत्पु०। **बन्दिजनख्यातिः**—बन्दिनश्च ते जनाश्च इति कर्म०। तैः ख्यातिः इति तृ० तत्पु०। **अमानुषोचिताभिः**—मानुषेभ्यः उचिताः इति च० तत्पु०। न मानुषोचिताः इति नञ् तत्पु०। ताभिः। **आरोपितालोकाभिमानाः**—आरोपितः अलीक; अभिमानः यैः ते इति बहु०। **मर्त्यधर्माणः**—मर्त्यस्य धर्माः येषां ते इति बहु०। **दिव्यांशावतीर्णमिव**—दिव्याः अंशाः इति कर्म०। दिव्यांशेभ्यः अवतीर्णम् इति पं० तत्पु०। **आत्मबाहुयुगलम्**—बाह्वोः युगलम् इति ष० तत्पु०। आत्मनः बाहुयुगलम् इति ष० तत्पु०।

अलङ्कार निर्देश –''स्वार्थनिष्पादनपरैः .... बकैः'' में रूपक तथा अवतीर्णमिव तथा सदैवतमिव में तथा अपरभुजद्वयमिव में उत्प्रेक्षा अलङ्कार है। **''दर्शनमपि ..... आकलयन्ति''** में प्रतीयमानोत्प्रेक्षा अलङ्कार है ।

मिथ्यामाहात्म्यगर्वनिर्भराश्च न प्रणमन्ति देवताभ्यः, न पूजयन्ति द्विजातीन्, न मानयन्ति मान्यान्, नार्चयन्त्यर्चनीयान्, नाभिवादयन्ति अभिवादनार्हान्, नाभ्युत्तिष्ठन्ति गुरून्। अनर्थकायासान्तरितविषयोपभोगं सुखमित्युपहसन्ति विद्वज्जनम्, जरावैक्लव्यप्रलपितमिति पश्यन्ति वृद्धजनोपदेशम्, आत्मप्रज्ञापरिभव इत्यसूयन्ति सचिवोपदेशाय, कुप्यन्ति हितावदिने। सर्वथा तमभिनन्दन्ति, तमालपन्ति, तं पार्श्वे कुर्वन्ति, तं संवर्द्धयन्ति, तेन सह सुखम् अवतिष्ठन्ते, तस्मै ददति, तं मित्रतामुपयान्ति, तस्य वचनं शृण्वन्ति, तत्र वर्षन्ति, तं बहु मन्यन्ते, तमाप्ततामापादयन्ति योऽहर्निशम् अनवरतमुपरचितांजलिः अधिदैवतमिव विगतान्यकर्तव्यः स्तौति, यो वा माहात्म्यम् उद्भावयति। किं वा तेषां साम्प्रतं, येषामतिनृशंसप्रायोपदेशनिर्घृणं कौटिल्यशास्त्रं प्रमाणम्, अभिचारक्रियाः क्रूरैकप्रकृतयः पुरोधसो गुरवः, पराभिसन्धानपरा मन्त्रिण उपदेष्टारः, नरपतिसहस्त्रभुक्तोज्झितायां लक्ष्म्यामासक्तिः मारणात्मकेषु शास्त्रेषु अभियोगः, सहजप्रेमार्द्रहृदयानुरक्ताः भ्रातर उच्छेद्याः।

तदेवं प्रायाति कुटिलकष्ट चेष्टासहस्रदारुणे राज्यतन्त्रे अस्मिन् महामोहान्धकारिणि च यौवने कुमार! तथा प्रयतेथाः यथा नोपहस्यसे जनैः, न निन्द्यसे साधुभिः, न धिक्क्रियसे गुरुभिः, नोपालभ्यसे सुहृद्भिः, न शोच्यसे विद्वद्भिः। यथा च न प्रकाश्यसे विटैः, न प्रहस्यसे कुशलैः, नास्वाद्यसे भुजङ्गैः, नावलुप्यसे सेवकैः न वञ्च्यसे धूर्तैः, न प्रलोभ्यसे वनिताभिः न विडम्ब्यसे लक्ष्म्या, न नर्त्यसे मदेन, नोन्मत्तीक्रियसे मदनेन, नाक्षिप्यसे विषयैः, नावकृष्यसे रागेण, नापह्रियसे सुखेन।

शब्दार्थ – मिथ्यामाहात्म्यगर्वनिर्भराः = अपने झूठे अभिमान के गर्व से परिपूर्ण, **अभिवादनार्हः** = पूजा योग्य, आदर योग्य, **अनर्थकायासान्तरितोपभोगसुखम्** = निष्फल प्रयास से उपभोग के सुख का व्यवधान, **जरावैक्लव्यप्रलपितम्** = बुढ़ापे की विह्वलता का प्रलाप, **आत्मप्रज्ञापरिभवः** = अपनी बुद्धि की पराजय, **अहर्निशम्** = रातों-दिन, **विगतान्यकर्तव्यः** = अन्य कार्यों से रहित, **अतिनृशंस प्रायोपदेशनिर्घृणम्** = अतिक्रूरता के प्रचुर उपदेश से निर्दय, **अभिचारक्रियाक्रूरैकप्रकृतयः** = हिंसा क्रिया से क्रूर स्वभाव वाले, **पराभिसन्धानपराः** = दूसरों को ठगने में तत्पर, **नरपतिसहस्त्रभुक्तोज्झितायाम्** = हजारों राजाओं द्वारा उपभोग कर छोड़ी गयी, **राज्यतन्त्रे** = शासन-व्यवस्था में, **अस्मिन् यौवने** = इस युवावस्था में, **न उपहस्यसे** = तुम्हारी हँसी न करें, **न धिक्क्रियसे** = धिक्कारे न जाओ।

संस्कृत शब्दार्थ – मिथ्यामाहात्म्यगर्वनिर्भराः = मिथ्या असत् माहात्म्यः गर्वः अभिमानः अहङ्कारः तेन निर्भराः धृताः गृहीताः ये ते। अनर्थकायासान्तरितोपभोगसुखम् = अनर्थकः निष्फलः निरुद्देश्यः यः आयासः परिश्रमः निगमागमग्रन्थानाम् अध्ययनेन स्वोपरि विहितानि श्रौतस्मार्तकर्माणि तेषु क्लेशः आयासः तेन अन्तरितः व्यवहितः बाधितः उपभोगः

विषयाङ्गनादिकोपभोगेन जातम् उत्पन्नसुखम् आनन्दः यस्य तम् । जरावैक्लव्यप्रलपितम् = जरा विस्रसा वार्द्धक्यं तेन वैक्लव्यं व्याकुलता क्षीणता तया प्रलपितं भाषितम् तत्। आत्मप्रज्ञापरिभवः = आत्मनः स्वस्य या प्रज्ञा बुद्धिः तस्याः बुद्धेः मतेः परिभवः तिरस्कारः। उपरचितांजलिः = उपरचिताः बद्धः अंजलिः हस्तयोः संयोजनं कृतं येन सः। अतिनृशंसप्रायोपदेशनिर्घृणम् = अतिनृशंसः अत्यधिकः क्रूरः।

अनुवाद – झूठे माहात्म्य (बड़प्पन) के गर्व से भरे हुए (वे राजा लोग) देवताओं को भी प्रणाम नहीं करते हैं। ब्राह्मणों को नहीं पूजते हैं। सम्माननीय लोगों को भी सम्मानित नहीं करते हैं। अभिवादन के योग्य व्यक्तियों का भी अभिवादन नहीं करते हैं। गुरुजनों के आगमन समय पर भी उनके सम्मान में नहीं उठते हैं, अर्थात् आसन नहीं छोड़ते हैं। निरर्थक परिश्रम से उपभोग सुख का व्यवधान करने वाले हैं – ऐसा (कहकर) विद्वज्जनों का उपहास करते हैं। बुढ़ापे की विकलता से प्रलाप है – इस रूप में वृद्धजनों के उपदेश को देखते हैं, समझते हैं। अपनी अर्थात् राजा की प्रज्ञा (बुद्धि) का परिभव (अपमान) है, ऐसा (सोचकर) सचिवों के उपदेश से ईर्ष्या करते हैं, हित की बातें कहने वाले से क्रोध करते हैं। उसी का सभी प्रकार से सम्मान करते हैं, (स्वागत करते हैं,) उसी से बातचीत करते हैं, उसी को अपने पास बैठाते हैं, उसी का संवर्द्धन करते हैं, उसी के साथ सुख से बैठते हैं, उसी को उपहारादि देते हैं, उसी से मित्रता करते हैं, उसी की बातें सुनते हैं, उसी पर अनुग्रहों की वर्षा करते हैं, उसी का बहुत आदर करते हैं और उसी को विश्वसनीय मानते हैं, जो दिन-रात लगातार हाथ जोड़े (अंजलि बनाये) हुए, दूसरे सभी कार्यों को भूलकर इष्टदेवता के समान स्तुति करता है अथवा माहात्म्य को प्रकट करता है, घोषित करता है। अथवा उनके लिए क्या उचित है अर्थात् कुछ भी उचित नहीं है, जिनके लिये अत्यधिक क्रूरता से परिपूर्ण उपदेशों के कारण कठोर कौटिल्यशास्त्र ही प्रमाण है। अभिचार क्रिया के कारण केवल क्रूर स्वभाव वाले पुरोहित ही गुरुजन हैं। दूसरों को ठगने में लगे हुए मन्त्री लोग ही उपदेश देने वाले हैं, हजारों राजाओं द्वारा उपभोग करने के बाद छोड़ी गई लक्ष्मी में अतिशय आसक्ति है, मारण-स्वभाव वाले शास्त्रों में आग्रह है, स्वाभाविक प्रेम से आर्द्र हृदय वाले अनुरक्त भाई लोग ही उच्छेद करने योग्य हैं।

इसलिए इस प्रकार की हजारों अत्यन्त कुटिल, कष्टदायक चेष्टाओं से भयानक राज्यतन्त्र में और महान् मोह को उत्पन्न कराने वाले इस यौवन में, हे प्रिय कुमार चन्द्रापीड! तुम्हें इस प्रकार से प्रयास करना चाहिए जिस प्रकार से लोगों द्वारा तुम्हारा उपहास न किया जाय, सज्जनों द्वारा निन्दा के पात्र न बनो, गुरुओं द्वारा धिक्कारे न जाओ, मित्रों द्वारा उलाहना न दिया जाये, विद्वानों द्वारा शोक के विषय न बन जाओ और जिस प्रकार से विटों द्वारा प्रकाशित न किये जाओ। लोक-व्यवहार में निपुण व्यक्तियों द्वारा तुम्हारी हँसी न उड़ाई जाये अथवा अकुशल व्यक्तियों द्वारा ठगे न जाओ, धूर्तों द्वारा ठगे न जाओ, सेवकसमूह द्वारा विनाश को प्राप्त न हो जाओ, स्त्रियों द्वारा लुभाये न जाओ, लक्ष्मी द्वारा विडम्बित न किये जाओ अर्थात् तुम्हें छोड़कर लक्ष्मी चली न जाय, अहंकार द्वारा नचाये न जाओ, कामदेव द्वारा पागल न बना दिये जाओ, विषयों द्वारा खींचे न जाओ, राग द्वारा आकृष्ट न किये जाओ, सुख द्वारा अपहृत न कर लिये जाओ।

संस्कृत भावार्थ – मिथ्यामाहात्म्यगर्वनिर्भरश्च असत्यमहत्त्वाहंकारेण परिपूर्णाः न प्रणमन्ति देवताभ्यः सावित्रादिदेवेभ्यः नमस्कारम् न कुर्वन्ति। न पूजयन्ति द्विजातीन्, द्विजन्मवेदाध्ययनशीलान् न सत्कुर्वन्ति। न मानयन्ति मान्यान्, पूजनीयान् न पूजयन्ति। नार्चयन्त्यर्चनीयान् अर्चनयोग्यानाम् अर्चनाम् न कुर्वन्ति। नाभिवादयन्त्यभिवादनार्हान् अभिवादनयोग्यानाम् अभिवादनम् न कुर्वन्ति। नाभ्युत्तिष्ठन्ति गुरून् विद्यादिगुरूणाम् समक्षे (आदरप्रदर्शनार्थम्) – अभ्युत्थानम् न कुर्वन्ति। अनर्थकायासान्तरितोपभोगसुखमिति व्यर्थतः क्रियासु श्रमेण बाधितम् विषयभोगानाम् सुखम् इति विचार्य उपहसन्ति विद्वज्जनम् विदुषाम्

उपहासं कुर्वन्ति। जरावैक्लव्यप्रलपितमिति वृद्धावस्थायां व्याकुलेन्द्रियभावेन जल्पनम् इति पश्यन्ति वृद्धोपदेश विद्यादिवद्धानां शिक्षावचांसि आकलयन्ति (अनर्थकवादम् इव मन्यन्ते इति भावः)। आत्मप्रज्ञापरिभव इति स्वबुद्धेः तिरस्करणम् इति। असूयन्ति सचिवोपदेशाय अमात्यादीनाम् उपदेशवचनेभ्यः क्रुध्यन्ति (उपदेशगुणेषु दोषम् अध्यस्यते इति भावः। कुप्यन्ति हितवादिने हितकरभाषिणे क्रुध्यन्ति। सर्वथा तमभिनन्दन्ति सर्वप्रकारेण तस्य अभिवादनं कुर्वन्ति, तमालपन्ति तेन सह संवादं कुर्वन्ति, तं पार्श्वे कुर्वन्ति तं स्वदृष्टिगोचरं विदधाति, तं सम्वर्धयन्ति तस्य सम्वर्धनं कुर्वन्ति, तेन सह सुखमवतिष्ठते तस्य सहवासेन आनन्दम् अनुभवन्ति, तस्मै ददति तम् अभिलक्ष्य धनादिदानं कुर्वन्ति, तं मित्रतामुपजनयन्ति तेन सह सख्यं कुर्वन्ति, तस्य वचनं श्रृण्वन्ति तस्य पुरुषस्य वचनानि आकर्णयन्ति, वर्षन्ति तस्मिन् पुरुषे धनादिकृपारूपवर्षणं कुर्वन्ति, तं बहु मन्यन्ते तस्य अधिकम् आदरं कुर्वन्ति, तमाप्ततामापादयन्ति तं पुरुषं विश्वासपात्रं जानन्ति योऽहर्निशमनवरतमुपरचिताञ्जलिरधिदैवतमिव यः जनः रात्रिन्दिवं निरन्तरं संयतहस्तपुटः देवभावम् इव अनुकल्प्य विगतान्यकर्तव्यः स्तौति अपरानुष्ठेयकर्मभ्यः उपरतः सन् स्तुतिं करोति, यो वा माहात्म्यमुद्भावयति अथ वा यः चाटुकारितया तेषां राज्ञां असन्महत्त्वस्य उद्भावनां करोति। किं वा तेषां साम्प्रतम् अथ वा किं तेषां राज्ञाम् उचितं येषामतिनृशंसप्रायोपदेशनिर्घृणं कौटिल्यशास्त्रं प्रमाणं यः अत्यन्तकठोरताबहुलशिक्षाभिः निर्दयं कौटिल्याचार्यस्य अर्थशास्त्रं प्रमाणरूपेण गृह्णाति। अभिचारक्रियाक्रूरैकप्रकृतयः पुरोधसो गुरवः हिंसाकर्मयुतश्येनयागादिषु नृशंसस्वभावाः पुरोहिताः आचार्याः। पराभिसन्धानपरा मन्त्रिणः उपदेष्टारः अन्यप्रवंचनापरायणाः अमात्याः उपदेशकर्तारः। नरपतिसहस्त्रभुक्तोज्झितायां लक्ष्म्यामासक्तिः राजसमूहेन उपभोगानन्तरं परित्यक्तायां लक्ष्म्यां गाढानुरागः। मारणात्मकेषु शस्त्रेष्वाभियोगः हत्याकर्मप्रधानेषु आयुधेषु उद्यमः। सहजप्रेमाद्र्हृदयानुरक्ता भ्रातर उच्छेद्याः स्वाभाविकजन्मजातानुरागेण सिंचितचित्तस्नेहयुताः सहोदराः मूलतः उच्छेदनीयाः।

व्याकरणत्मक टिप्पणी – माहात्म्यम्–महात्मन्+ष्यञ्। **पूजयन्ति**–पूज्,लट्,प्र.पु.ब.व.। **अर्चनीयान्**–अर्च्+अनीयर्। **उपहसन्ति**–उप+हस्,लट्,प्र.पु.ब.व.। **वैक्लव्यम्**–विक्लव+ ष्यञ्। **हितवादी**–हित+वद्+णिनि। **ददति**–दा,लट्,प्र.पु.ब.व.। **वचनम्**–ब्रू(वच्)+ल्युट्। **तत्र**–तद्+त्रल्। **आप्तताम्**–आप+क्त+टाप्। **विगतम्**–वि+गम्+क्त।

समास – मिथ्यामाहात्म्यगर्वनिर्भराः–मिथ्या माहात्म्यम् इति कर्म०। मिथ्यामाहात्म्यस्य गर्वः इति ष० तत्पु०। मिथ्यामाहात्म्यगर्वेण निर्भराः इति तृ० तत्पु०। **अभिवादनार्हाः**–अभिवादनम् अर्हन्ति ये ते इति बहु०। **अनर्थकायासान्तरितोपभोगसुखम्**–अनर्थकश्च असौ आयासश्च इति कर्म०। उपभोगस्य सुखमिति ष० तत्पु०। अनर्थकायासेन अन्तरितम् उपभोगसुखं येन तत् इति बहु०।**जरावैक्लव्यप्रलपितम्**–जरसः वैक्लव्यम् इति ष० तत्पु०। तस्मिन् प्रलपितम् इति ष० तत्पु०। **वृद्धजनोपदेशः**–वृद्धाश्च ते जनाश्च इति कर्म०। तेषाम् उपदेशः इति ष० तत्पु०। **आत्मप्रज्ञापरिभवः**–आत्मनः प्रज्ञा इति ष० तत्पु०। तस्याः– परिभवः इति ष० तत्पु०। **सचिवोपदेशाय** – सचिवानाम् उपदेशाः इति ष० तत्पु०। तस्मै। **अनिशम्**–अहश्च निशा च इति द्वन्द्व। **उपरचितांजलिः**–उपरचितः अंजलिः येन सः इति बहु०। **विगतान्यकर्तव्यः**–विगतम् अन्यत् कर्तव्यं यस्य सः बहु०। **अतिनृशंसप्रायोपदेशनिर्घृणम्**–निर्गता घृणा यस्मात् तत् इति अव्ययी० ।अतिनृशंसप्रायेण उपदेशेन निघृणमिति तृ० तत्पु०।**अभिचारक्रियाक्रूरप्रकृतयः**–अभिचारस्य क्रिया इति ष० तत्पु०। अभिचारक्रियया क्रूरा प्रकृतिः येषां ते इति बहु०। **पराभिसन्धानपराः**–परेषाम् अभिसन्धानम् इति ष० तत्पु। **नरपतिसहस्त्रभुक्तोज्झिता** – नरपतीनां सहस्त्रम् इति ष० तत्पु०। पूर्व भुक्ता पश्चात् उज्झिता इति कर्म! नरपतिसहस्त्रैः भुक्तोज्झिता तस्याम् इति तत्पु०। **सहजप्रेमाद्र्हृदयानुरक्ताः**–सहजं प्रेम इति कर्म०। सहजप्रेम्णा आर्द्र हृदयम् इति तृ० तत्पु०। तेन अनुरक्ताः इति तृ० तत्पु०। **मारणात्मकेषु**–मारणम् एव आत्मा येषां तेषु इति बहु०।

अलङ्कार निर्देश –''**अधिदैवतमिव**'' में उपमा अलङ्कार है। ''**किंवा तेषां ...... उच्छेद्याः**'' में समुच्चय अलङ्कार है।

कामं भवान् प्रकृत्यैव धीरः। पित्रा च महता प्रयत्नेन समारोपितसंस्कारः, तरलहृदयम् अप्रतिबुद्धं च मदयन्ति धनानि। तथापि भवद्गुणसन्तोषो मामेवं मुखरीकृतवान्। इदमेव च पुनः पुनरभिधीयसे। विद्वांसमपि सचेतनमपि महासत्त्वमपि अभिजातमपि धीरमपि प्रयत्नवन्तमपि पुरुषमियं दुर्विनीता खलीकरोति लक्ष्मीरिति। सर्वथा कल्याणैः पित्रा क्रियमाणमनुभवतु भवान् नवयौवराज्याभिषेकमङ्गलम्। कुलक्रमागतामुद्वह पूर्वपुरुषैः ऊढां धुरम्। अवनमय द्विषतां शिरांसि। उन्नमय स्वबन्धुवर्गम्। अभिषेकानन्तरं च प्रारब्धदिग्विजयः परिभ्रमन् विजितामपि तव पित्रा सप्तद्वीपभूषणां पुनर्विजयस्व वसुन्धराम्। अयं च ते कालः प्रतापमारोपयितुम्। आरूढप्रतापो हि राजा त्रैलोक्यदर्शीव सिद्धादेशो भवति इत्येतावदभिधाय उपशशाम। उपशान्तवचसि शुकनासे चन्द्रापीडस्ताभिरूपदेशवाग्भिः प्रक्षालित इव, उन्मीलित इव, स्वच्छीकृत इव, निर्मृष्ट इव, अभिषिक्त इव, अभिलिप्त इव, अलङ्कृत इव, पवित्रीकृत इव, उद्भासित इव, प्रीतहृदयो मुहूर्तं स्थित्वा स्वभवनमाजगाम ।

शब्दार्थ – **तरलहृदयम्** = चंचल चित्तवाला, **अप्रतिबुद्धम्** = अज्ञानी, **महासत्त्वम्** = महान् शक्तिशाली, **खलीकरोति** = अधम बना देती है। **कुलक्रमागताम्** = कुलक्रम से प्राप्त, **उद्वह** = वरण करो, **द्विषताम्** = शत्रुओं के, **त्रैलोक्यदर्शीव** = त्रैलोक्यदर्शी की तरह। **विजितमपि** जीती हुई। **वसुन्धराम्** = पृथिवी को। **आरुढप्रताप**ः = अपने प्रताप को स्थापित करने वाला।

संस्कृत शब्दार्थ – समारोपितसंस्कारः=समारोपिताः विहिताः शास्त्रविधानानुसारं सम्पादिताः संस्काराः जातकर्मादयः यस्य सः । उपशान्तवचसि=उपशान्तम् उपरतं वचः वाग्व्यापारः यस्य तस्मिन् (शुकनासे)। प्रीतहृदयः =प्रीतं प्रसन्न हृष्टं हृदयं चेतः यस्य सः (चन्द्रापीडः)।

अनुवाद – (मैं जानता हूँ कि) आप स्वभाव से ही धीर हैं तथा आपके पिता ने (महान् प्रयत्न से) आपके विधिवत् संस्कार कराये हैं। चञ्चल मन वाले तथा अजागरुक बुद्धि वाले व्यक्ति को धन मतवाला बना देते हैं । तथापि आपके गुणों के कारण उत्पन्न हुए सन्तोष ने मुझे इस प्रकार उपदेश देने के लिए मुखरित किया है । बारम्बार यही कहा जा रहा है कि यह दुष्टा लक्ष्मी ज्ञान प्राप्त, सावधान रहने वाले, अत्यन्त साहसी, उच्च कुल में उत्पन्न, धैर्यसम्पन्न तथा प्रयत्नशील पुरुष को भी दुष्ट बना देती है। आप पिता के द्वारा कल्याणयुक्त मङ्गलाचारों से सम्पन्न अभिनव यौवराज्याभिषेक रूपी मङ्गल का अनुभव करो। वंश परम्परा से प्राप्त तथा अपने पूर्वजों के द्वारा वहन किए गए राज्यभार को स्वीकार करो। शत्रुओं के शिरों को झुकाओ। निज बन्धुवर्ग को उन्नत करो। अभिषेक के बाद दिग्विजय को प्रारम्भ करने वाले आप घूमते हुए अपने पिता के द्वारा जीती हुई सात द्वीपों से विभूषित पृथिवी को पुनः जीत लो। तुम्हारे लिए प्रताप को अर्जन करने का यह समय है क्योंकि प्रताप से सम्पन्न राजा ही त्रिलोकदर्शी योगी के समान सफल आज्ञाओं वाला होता है । इस प्रकार (इतना) कहकर शुकनास शान्त हो गए । शुकनास के उपदेश वचनों से विरत हो जाने पर चन्द्रापीड ने उन पवित्र उपदेश वाक्यों से स्वयं को धुला हुआ सा, विकसित हुआ सा, स्वच्छ किया हुआ सा, कोमल हुआ सा, अभिषिक्त हुआ सा, (चन्दन आदि से) लिप्त हुआ सा, सजाया हुआ सा, पवित्र किया हुआ सा, चमका हुआ सा (अनुभव किया और फिर वह) प्रसन्नमन से कुछ काल वहाँ रुककर अपने भवन की ओर चला गया।

संस्कृत भावार्थ – कामं यद्यपि भवान् प्रकत्यैव धीरः सम्यग् शिक्षया विद्याप्राप्त्यनन्तरं च गम्भीरः सञ्जातः। पित्रा च समारोपितसंस्कारः। तरलहृदयमप्रतिबुद्धं च । मदन्ति धनानि

चंचलचित्तम अनवबोधितं च पुरुषं लक्ष्मीः मत्तं करोति। तथापि भवद्गुणसन्तोषो मामेवं मुखरीकृतवान् राजकुमारस्य शौर्य धैर्य विनयादिगुणाग्रहेण सन्तुष्टः सन् अनेन प्रकारेण अहम् उक्तवान्। इदमेव च पुनः पुनरभिधीयसे इमानि च उपदेशवचनानि वारम्वारं कथ्यन्ते। विद्वांसमपि पण्डितम् अपि, सचेतनमपि सावधानम् अपि, महासत्त्वमपि अत्यन्तबलशालिनम् अपि अभिजातमपि कुलीनम् अपि, धीरमपि धैर्यवन्तम् अपि, प्रयत्नवन्तमपि यत्नशीलम् अपि पुरुषमियं दुर्विनीता खलीकरोति एषा विनयविरहिता श्रीः उक्तगणयुक्तम् अपि पुरुषम् अधमम् करोति। सर्वथा कल्याणैः विना क्रियमाणमनुभवतु भवान् यौवराज्याभिषेकमङ्गलं सर्वप्रकारेण स्वजनकेन विधीयमानानां कल्याणानां यौवराज्याभिषेकस्य च अनुभवं करोतु। कुलक्रमागतामुद्वह पूर्वपुरुषरूढां धुरम्। कुलस्य परम्परया प्राप्तस्य स्ववंशजातपूर्वजनैः धारितस्य राज्यभारस्य उद्वहनं कुरु। अवनमय द्विषतां शिरांसि शत्रूणां मस्तकानि अवनतानि कुरु। उन्नमय स्वबन्धुवर्गं स्वबन्धुबान्धवानाम् उन्नतिं विधेहि। अभिषेकानन्तर च प्रारब्धदिग्विजयः परिभ्रमन् राज्ये अभिषिक्तः सन् पश्चात् दिग्विजयस्य उपक्रमं कुर्वाणः परिभ्रमणं कुर्वाणः विजितामपि तव पित्रा सप्तद्वीपभूषणां स्वजनकेन स्वायत्तीकृतां जम्बूप्रभृतिसप्तद्वीपभूषितां पुनर्विजयस्व वसुन्धरां पृथिवीं भूयः स्वायत्तीकुरु। अयं च ते कालः प्रतापमारोपयितुम् एषः च समयः तव रिपुषु प्रभावारोपणस्य। आरूढप्रतापो राजा त्रैलोक्यदर्शीव सिद्धादेशः भवति आरोपणविषयीकृतः प्रभावः यस्य सः नृपः त्रिकालद्रष्टा योगी इव सिद्धशासनः भवति। उपशान्तवचसि शुकनासे (इत्थम् इमानि वचांसि उक्तवा आचार्यः शान्तः जातः) आचार्यशुकनासस्य वाग्व्यापारस्य शान्ते जाते युवराजः चन्द्रापीडः तैः शिक्षावचोभिः प्रक्षालित इव धौत इव, मीलित इव उन्मेषं प्राप्तः इव, स्वच्छीकृत इव निर्मलायितः इव, संस्कृत इव, अभिषिक्त इव स्नातः इव, अभिलिप्त इव कृतावलेपः इव, अलङ्कृत इव अलङ्करणः भूषितः इव, पवित्रीकृत इवा पूतः इव उद्भासित इव उद्दीप्तः इव, प्रीतहृदयो प्रसन्नचित्तं मूहूर्तं स्थित्वा अल्पकालाय अवस्थानं कृत्वा स्वभवनमाजगाम निजनिवासस्थानम् आगतवान्।'

व्याकरणत्मक टिप्पणी – **समारोपिता**–सम्+आ+रुह्+क्त। **प्रतिबुद्धम्**–प्रति+बुध्+क्त। **मदयन्ति**–मद्+णिच्,लट्,ब.व.। **मुखरीकृतवान्**–मुखर+च्वि+कृ+क्तवतु। **यौवराज्यम्**–युवराज + ष्यञ्। **अभिषेकः**–अभि+षिच्+घञ्। **आगतम्**–आ+गम्+क्त। **ऊढाम्**–वह्+क्त+टाप्। **प्रारब्धः**–प्र+आ+रभ्+क्त। **परिभ्रमन्**–परि+भ्रम+शतृ। **प्रतापम्**–प्र+तप्+घञ्।

समास – **तरलहृदयम्**–तरलं हृदयं यस्य सः बहु०। तम् । **अप्रतिबुद्धम्**–न प्रतिबुद्धः इति नञ् तत्पु०। **भवद्गुणसन्तोषः**–भवतः गुणाः इति पं० तत्प०। तैः सन्तोषः इति तृ० तत्पु०। **कुलक्रमागताम्**–कुलस्य क्रमाः इति ष० तत्पु०। कुलक्रमात् आगतम् इति पं० तत्पु०। ताम्। **प्रारब्धदिग्विजयः**–प्रारब्धः दिग्विजयः येन सः इति बहु०। दिशां विजयः इति ष० तत्पु०। **सप्तद्वीपभूषणाम्** – सप्तानां द्वीपानां समाहारः इति द्विगु स० । सप्तद्वीपाः भूषणानि यस्याः इति बहु०। ताम्। **आरुढप्रतापः**–आरूढः प्रतापः यस्यासौ इति बहु०। **सिद्धादेशः**–सिद्धः आदेशः यस्यासौ इति बहु०। **त्रैलोक्यदर्शी**–त्रयाणां लोकानां दर्शी इति ष० तत्प०/दश णिनि) प्र०वि० ए० व०। **उपशान्तवचसि** – उपशान्तं वचः यस्य इति बहु । तस्मिन् ।

अलङ्कार निर्देश – **'त्रैलोक्यदर्शीव''** में उपमा अलङ्कार तथा प्रक्षालित इव में उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

बोध प्रश्न

1) चन्द्रापीड को किसने उपदेश दिया?

....

....

2) 'पराभिसन्धानपराः' का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

....

3) 'माहात्म्यम्' में किस प्रत्यय का प्रयोग किया गया है?

....

....

....

....

....

4) 'अनिशम्' पद में कौन सा समास है?

....

....

....

....

....

5) शुकनास का उपदेश सुनने के अनन्तर चन्द्रपीड कहाँ गया?

....

....

....

....

....

6) देवताओं को कौन प्रणाम नहीं करते?

....

....

....

....

....

अभ्यास प्रश्न

1) 'भवान् प्रकृत्यैव धीरः' का तात्पर्य लिखिए।

2) शुकनास के इस उपदेश को अपनी भाषा में लिखिए।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

3) बाणभट्ट के शब्दप्रयोग को स्पष्ट कीजिये ?

4) बाणभट्ट की उपदेशैली पर प्रकाश डालिए।

9.3 सारांश

प्रस्तुत इकाई में आपने पढ़ा कि वैशम्पायन चन्द्रापीड को राजाओं के बारे में बताते हुए कहता है कि –

कुछ राजा तो स्वार्थ साधन में तत्पर, धन रूपी कच्चे माँस के ग्रास के लोभी, राजभवन रूपी कमलवन में धूर्त बक के समान; दोषों को गुणपक्ष पर आरोपित करने वाले भीतर ही स्वयं भी हंसने वाले, धोखा देने में कुशल धूर्तों के द्वारा समझाये जाते हैं कि जुआ विनोद है, परस्त्री के साथ सम्भोग चातुर्य है, शिकार खेलना व्यायाम है, मद्यपान करना विलास है, प्रमाद करना शौर्य है, अपनी पत्नी का त्याग करना व्यसनहीनता है, गुरुजनों के वचनों का तिरस्कार करना स्वातन्त्र्य है, सेवकों को न जीतना (अर्थात् उन्हें अपने वश में न रखना) सुखपूर्वक सेवा है, नृत्य, गीत, वाद्य तथा वेश्याओं में आसक्ति होना रसिकता है, महान् अपराध पर कान न देना महानुभावता है, तिरस्कार को सह लेना क्षमा है, स्वच्छन्दता प्रभुत्व है, देवताओं का अपमान महासत्त्वता है, बन्दियों के द्वारा गायी गयी प्रशंसा यश है, चञ्चलता ही उत्साह है, विशेषज्ञ न होना ही पक्षपातहीनता है इस प्रकार देवोचित स्तुतियों के द्वारा ठगे जाते हुए, धन रूपी मद से उन्मत्त चित्त वाले निश्चेतनता के कारण ऐसा ही है। इस प्रकार स्वयं पर मिथ्या अभिमान का आरोपण करने वाले मरणशील होने पर भी स्वयं को दिव्य अंश का अवतार तथा मानुषत्व से ऊपर (स्वयं को देवता) मानते हुए, अलौकिक चेष्टाओं तथा महात्म्य को प्रारम्भ करने वाले सब लोगों की हंसी का पात्र बनते हैं। सेवकजन द्वारा की गई स्वयं की विडम्बना का अभिनन्दन करते हैं। मन में देवता के अध्यारोपण की प्रतारणा से उत्पन्न सम्भावना के कारण उपहत (यह राजा लोग) अपने बाहयुगल को मानो अन्दर प्रविष्ट दो अन्य भुजाओं से युक्त (चतुर्भुज रूप) मानते हैं। अपनी त्वचा के भीतर संकुचित हुए तृतीय नेत्र से युक्त अपने ललाट को मानते हैं। दर्शन देने को अनुग्रह समझते हैं। किसी पर दृष्टि डालने को उपकार मानते हैं। वार्तालाप करने को पुरस्कार मानते हैं। आज्ञा देने को वरदान समझते हैं। किसी को स्पर्श करने को उसे पवित्र कर देना मानते हैं।

झूठे माहात्म्य (बड़प्पन) के गर्व से भरे हुए (वे राजा लोग) देवताओं को भी प्रणाम नहीं करते हैं। ब्राह्मणों को नहीं पूजते हैं। सम्माननीय लोगों को भी सम्मानित नहीं करते हैं। अभिवादन के योग्य व्यक्तियों का भी अभिवादन नहीं करते हैं। गुरुजनों के आगमन समय पर भी उनके सम्मान में नहीं उठते हैं, अर्थात् आसन नहीं छोड़ते हैं। निरर्थक परिश्रम से उपभोग सुख का व्यवधान करने वाले हैं – ऐसा (कहकर) विद्वज्जनों का उपहास करते हैं। बुढ़ापे की विकलता से प्रलाप है – इस रूप में वृद्धजनों के उपदेश को देखते हैं, समझते हैं। अपनी अर्थात् राजा की प्रज्ञा (बुद्धि) का परिभव (अपमान) है, ऐसा (सोचकर) सचिवों के उपदेश से ईर्ष्या करते हैं, हित की बातें कहने वाले से क्रोध करते हैं। उसी का सभी प्रकार से सम्मान करते हैं, (स्वागत करते हैं,) उसी से बातचीत करते हैं, उसी को अपने पास बैठाते हैं, उसी का संवर्द्धन करते हैं, उसी के साथ सुख से बैठते हैं, उसी को उपहारादि देते हैं, उसी से मित्रता करते हैं, उसी की बातें सुनते हैं, उसी पर अनुग्रहों की वर्षा करते हैं, उसी का बहुत आदर करते हैं और उसी को विश्वसनीय मानते हैं, जो दिन-रात लगातार हाथ जोड़े (अंजलि बनाये) हुए, दूसरे सभी कार्यों को भूलकर इष्टदेवता के समान स्तुति करता है अथवा माहात्म्य को प्रकट करता है, घोषित करता है। अथवा उनके लिए क्या उचित है अर्थात् कुछ भी उचित नहीं है, जिनके लिये अत्यधिक क्रूरता से परिपूर्ण उपदेशों के कारण

कठोर कौटिल्यशास्त्र ही प्रमाण है। अभिचार क्रिया के कारण केवल क्रूर स्वभाव वाले पुरोहित ही गुरुजन हैं। दूसरों को ठगने में लगे हुए मन्त्री लोग ही उपदेश देने वाले हैं, हजारों राजाओं द्वारा उपभोग करने के बाद छोड़ी गई लक्ष्मी में अतिशय आसक्ति है, मारण-स्वभाव वाले शास्त्रों में आग्रह है, स्वाभाविक प्रेम से आर्द्र हृदय वाले अनुरक्त भाई लोग ही उच्छेद करने योग्य हैं।

इसलिए इस प्रकार की हजारों अत्यन्त कुटिल, कष्टदायक चेष्टाओं से भयानक राज्यतन्त्र में और महान् मोह को उत्पन्न कराने वाले इस यौवन में, हे प्रिय कुमार चन्द्रापीड! तुम्हें इस प्रकार से प्रयास करना चाहिए जिस प्रकार से लोगों द्वारा तुम्हारा उपहास न किया जाय, सज्जनों द्वारा निन्दा के पात्र न बनो, गुरुओं द्वारा धिक्कारे न जाओ, मित्रों द्वारा उलाहना न दिया जाये, विद्वानों द्वारा शोक के विषय न बन जाओ और जिस प्रकार से विटों द्वारा प्रकाशित न किये जाओ। लोक-व्यवहार में निपुण व्यक्तियों द्वारा तुम्हारी हँसी न उड़ाई जाये अथवा अकुशल व्यक्तियों द्वारा ठगे न जाओ, धूर्तों द्वारा ठगे न जाओ, सेवकसमूह द्वारा विनाश को प्राप्त न हो जाओ, स्त्रियों द्वारा लुभाये न जाओ, लक्ष्मी द्वारा विडम्बित न किये जाओ अर्थात् तुम्हें छोड़कर लक्ष्मी चली न जाये, अहंकार द्वारा नचाये न जाओ, कामदेव द्वारा पागल न बना दिये जाओ, विषयों द्वारा खींचे न जाओ, राग द्वारा आकृष्ट न किये जाओ, सुख द्वारा अपहृत न कर लिये जाओ।

मैं जानता हूँ कि आप स्वभाव से ही धीर हैं तथा आपके पिता ने महान् प्रयत्न से आपके विधिवत् संस्कार कराये हैं। चंचल मन वाले तथा अजागरुक बुद्धि वाले व्यक्ति को धन मतवाला बना देते हैं । तथापि आपके गुणों के कारण उत्पन्न हुए सन्तोष ने मुझे इस प्रकार उपदेश देने के लिए मुखरित किया है। बारम्बार यही कहा जा रहा है कि यह दुष्टा लक्ष्मी ज्ञान प्राप्त, सावधान रहने वाले, अत्यन्त साहसी, उच्च कुल में उत्पन्न, धैर्यसम्पन्न तथा प्रयत्नशील पुरुष को भी दुष्ट बना देती है। आप पिता के द्वारा कल्याणयुक्त मङ्गलाचारों से सम्पन्न अभिनव यौवराज्याभिषेक रूपी मङ्गल का अनुभव करो। वंश परम्परा से प्राप्त तथा अपने पूर्वजों के द्वारा वहन किए गए राज्यभार को धारण करो। शत्रुओं के शिरों को झुकाओ। निज बन्धुवर्ग को उन्नत करो। अभिषेक के बाद दिग्विजय को प्रारम्भ करने वाले आप घूमते हुए अपने पिता के द्वारा जीती हुई सात द्वीपों से विभूषित पृथिवी को पुनः जीत लो। तुम्हारे लिए प्रताप को अर्जन करने का यह समय है। क्योंकि प्रताप से सम्पन्न राजा ही त्रिलोकदर्शी योगी के समान सफल आज्ञाओं वाला होता है । इस प्रकार (इतना) कहकर शुकनास शान्त हो गए । शुकनास के उपदेश वचनों से विरत हो जाने पर चन्द्रापीड ने उन पवित्र उपदेश वाक्यों से स्वयं को धुला हुआ सा, विकसित हुआ सा, स्वच्छ किया हुआ सा, कोमल हुआ सा, अभिषिक्त हुआ सा, (चन्दन आदि से) लिप्त हुआ सा, सजाया हुआ सा, पवित्र किया हुआ सा, चमका हुआ सा (अनुभव किया और फिर वह) प्रसन्नमन (हुआ) कुछ काल वहाँ रुककर अपने भवन की ओर चला गया।

9.4 शब्दावली

अपरे	–	अन्य राजा गण,
स्वार्थनिष्पादनपरैः	–	स्वार्थ की सिद्धि में तत्पर,
धनपिशितग्रासगृध्रैः	–	धनरूपी माँस को खाने वाले गिद्ध,
आस्थाननलिनीबकैः	–	सभामंडप रूप कमलिनी के बक,
परदाराभिगमनम्	–	परायी स्त्री का उपभोग,

मृगया	–	आखेट,
प्रयत्तता	–	मतवालापन,
स्वदारपरित्यागः	–	अपनी पत्नी का परित्याग,
अव्यसनिता	–	अनासक्ति,आसक्तिराहित्य,
अवधीरणम्	–	तिरस्कार,
अपरप्रणेयत्वम्	–	स्वतन्त्रता, अपराधीनता
अजितभृत्यता	–	भृत्यों पर अधिकार न होना,
पराभवसहत्वम्	–	पराजय की सहनशीलता,
महासत्त्वता	–	अतिशय शक्तिशालिता,
तरलता	–	चंचलता,
प्रतारणकुशलैः	–	वंचना में निपुण,
अलीकाभिमानाः	–	मिथ्या अभिमान वाला,
दिव्यांशावतीर्णम्	–	देवताओं के अंश से अवतीर्ण,
सदैवतम्	–	देवभाव से युक्त,
अतिमानुषम्	–	मनुष्यता को अतिक्रान्त करने वाला,
प्रारब्धदिव्योचितचेष्टानुभावाः	–	देवताओं जैसी चेष्टा करने वाले,
त्वगन्तरिततृतीयलोचनम	–	ललाट चर्म में छिपी तीसरी नेत्र वाला।

9.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) कादम्बरी – भावबोधिनी व्याख्या सहित, डॉ. जयशंकर लाल त्रिपाठी, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 1993।

2) कादम्बरी – महोपाध्याय भानुचन्द्रसिद्धचन्द्र कृत टीका सहित, सं. काशीनाथ पाण्डुरङ्ग परब्, निर्णयसागर प्रेस्, बॉम्बे, 1849 (शकाब्द)।

9.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1) चन्द्रापीड को शुकनास ने उपदेश दिया।

2) 'पराभिसन्धानपराः' का अर्थ है – दूसरे को ठगने में तत्पर।

3) 'माहात्म्यम्' में ष्यञ् प्रत्यय का प्रयोग किया गया है।

4) 'अनिशम्' पद में द्वन्द्व समास है।

5) शुकनास का उपदेश सुनने के अनन्तर चन्द्रपीड अपने भवन में गया।

6) देवताओं को झूठे माहात्म्य के गर्व से भरे हुए राजा लोग प्रणाम नहीं करते।

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY